ग्रन्थार्थसंग्रहस्य विषयानुक्रमः

॥ श्रीश्रीगौरकृष्णाभ्यां नमः ॥

आशीरभिनन्दन ।

बड़े हर्ष का विषय है कि—श्रीवृन्दावनस्थ श्रीश्रीराधारमण देव सेवाधिकारी माननीय गोस्वामी श्रीगोपाललालजी महोदय के पौत्र आयुष्मान् श्रीकृष्णचन्द्र गोस्वामी की अभी किशोरावस्था में प्रथम परीक्षा पाठ्य पुस्तकों के पढ़ने में ही यह उपकार बुद्धि हुई कि—लघुकौमुदी पठनार्थी बालगति बालकों की सुविधा के लिये तद्भूत्य सूत्र वृत्ति वार्तिक प्रभृति का यथायुक्तार्थ हिन्दी में छपा कर प्रकाशित किया।

यद्यपि उक्ताचार्य—गोस्वामी वंश के ऊपर प्रथम से ही भगवती भारती का असाधारणानुग्रह था। इसके प्रमाण जागरूक हैं। तथाऽपि वर्त्तमान शताब्दी के शेष तृतीयांशके आरम्भ के प्रायः इस उन्नत वंश पर अनुग्रह के बदले कोप कहना सङ्गत प्रतीत होता है, क्योंकि स्वरूपानुकूल सर्वज्ञानमूल सकलपुमर्थ सम्पादनक्षम संस्कृत विद्या से वैमुख्य इस वंश में आगया है। यदि कुछ शिक्षा पिपासा किसी लौकिकाभिमन्ति में मृगतृष्णावत किसी बालक की होती भी है तो वर्त्तमान राजभाषा में, परन्तु खेदावसर है कि यह भी परीक्षोत्तीर्णता बोधक—पत्र प्राप्ति के लिये, न कि योग्यता के लिये,

ऐसे सांक्रामिक वातावरण में भी उक्त अनुवादक की प्रकृत विषय में प्रवृत्ति उत्साह रुचि सर्वथा ही प्रशंसनीय है।

यद्यपि इस अनुवाद में अनेक स्थान पर प्रमाद हुआ है परन्तु हमारी दृष्टि में यह क्षम्य है। भविष्यत् में जिज्ञासु बालकों की भ्रान्ति बचाने के लिये, अन्त में शुद्धिपत्र द्वारा ज्ञात शुद्धियों का संशोधन प्रकाशित करना अत्यावश्यक प्रतीत होता है।

शेष में जगदीश्वर से साञ्जलि प्रार्थना है कि अनुवादक श्रीकृष्णचन्द्र की आरोग्य के साथ दीर्घायुलोभ पूर्वक संस्कृत विद्या की समुचितोपासना में तीव्रासक्ति होवे और स्वरूप-विरोधि कुप्रवृत्तियों में दृढ़ घृणा बनी रहे।

इति शम्।

श्रीश्रीराधारमणजयन्ती वै० सं० १९९५ काशी	आशीर्वादक— साहित्यदर्शनाद्याचार्य तर्करत्न न्यायरत्न दामोदर गोस्वामी।

भारतवर्ष में जिस प्रकार अनेक विद्याओं का भण्डार इसी प्रकार यहां की व्याकरण प्रणाली भी अद्वितीय है। ार में रहकर जो व्याकरण से वंचित हैं। उसने नहीं जाना और इस प्रकार से मानो संसार में र्थक ही है। हमारे इस देश के पूर्वज महानुभाव दिव्य स्वभाव ालज्ञ महायोगियों ने जन्म ग्रहण करके अपने अनन्त ज्ञान की ेमा से इस जगत को अनन्त और अनादि जानकर अपने प्रतिहत योगबल से ब्रह्म विषयक साहित्य व्याकरण इत्यादि र्माण किये हैं। तभी से लेकर कितने ही वक्त, समय ने पलटा ाया परन्तु फिरभी आजकल हमारा भारतवर्ष रत्न भंडार के ाम से विख्यात है। उन्हीं अमूल्य रत्नों में से वरदराचार्य्य कृत घुसिद्धान्तकौमुदी भी है। इसका जो सामान यहां की विद्वत ण्डली में है वह भी किसी व्यक्ति से छिपा नहीं है। क्योंकि ाह्मणों के बालकों को अक्षरों का परिचय होते ही लघुकौमुदी की ाक्षा प्रारम्भ करदी जाती है। लघुकौमुदी में जो शब्द तथा ातुएं आई हैं उनके रूपों को याद करने के लिये कई ुस्तकें छप चुकी हैं परन्तु विद्यार्थियों को सूत्रों का अर्थ याद

करने में जितनी कठिनता पड़ती है, उसका अनुमान नहीं कर सकते हैं। अध्यापकों को भी [illegible] के विद्यार्थियों को पढ़ाने से ही समय नहीं मिलता दूसरे अनुत्तीर्णी के विद्यार्थी की प्रारम्भिक शिक्षा कमजोर होने के कारण कमजोर रहती अतः ऐसी अवस्था में विद्यार्थियों को बहुत कष्ट उठाना पड़ता है। ऐसी न्यूनता को देखकर आचार्य कृष्णानन्द गोस्वामी ने बड़े परिश्रम के साथ इस को दूर करने के लिये यह संग्रह नामक पुस्तक तयार की है, इसमें विद्यार्थी सरलता से सूत्र का अर्थ सुबोधार्थ तथा पर्यन्त प्रक्रियाओं में भी प्रत्ययान्त तक विग्रह वार कर अपने विद्यार्थियों को जितनी सरलता इस पुस्तक से मिलेगी उतनी …………। इस पुस्तक के संशोधन में व्याकरणा- पं० सीतारामजीशास्त्री साहित्य वेदान्तशास्त्री तथा व्याकरण पं० घोघेलालजी शास्त्री ने भी निरन्तर परिश्रम किया अतः धन्यवाद के योग्य हैं।

साहित्य दर्शनाचार्य—

तर्करत्न न्याय रत्नाचार्य

गोस्वामी दामोदर लालजी शास्त्री

बनारस।

समर्पण

पंडित चोखेलालजी शास्त्री व्याकरणतीर्थ

के

कर कमलों में सादर समर्पित है।

आपका—

[[illegible]]

श्री श्री कृष्णचैतन्य चन्द्राय नमः ।

अर्थ संग्रहः

❀ लघुसिद्धान्त कौमुद्याः प्रारभ्यतेऽर्थम् ❀

नत्वा सरस्वतीं देवीं शुद्धां गुण्यां करोम्यहम् ।
पाणिनीय प्रवेशाय लघुसिद्धान्त कौमुदीम् ॥

अहं लघुसिद्धान्तकौमुदीं करोमि, किं कृत्वा, सरस्वतीं देवीं, नत्वा, कस्मै प्रयोजनाय पाणिनीयप्रवेशाय, कीदृशीं सरस्वतीं देवीं शुद्धाम्-पुनः कीदृशीं सरस्वतीं देवीं गुण्यामिति ।

अहं वरदराचार्य्यः, सिद्धोऽन्तो येषान्ते सिद्धान्ताः कौ पृथिव्यां मोदन्ते जना कुमुदः, कुमुदस्य इयं कौमुदी, सिद्धान्तानां कौमुदीव, (मोदनं मुत् कौ पृथिव्यां मुतः आनन्दो यस्मात् असौ कुमुद चन्द्रः तस्येयं शक्तिः कौमुदी) कौमुदी, सिद्धान्त कौमुदी, (लघ्वी चासौ सिद्धान्त कौमुदी, लघुसिद्धान्त कौमुदी ताम्) लघुसिद्धान्त कौमुदीम् , एतन्नामकग्रन्थम् , करोमि, विदधामि, किं कृत्वा सरस्वतीं देवीं नत्वा, प्रणम्य, कस्मै प्रयोजनाय (पणनं

श्री श्री कृष्णचैतन्य चन्द्राय नमः ।

अर्थ संग्रहः

॥ लघुसिद्धान्त कौमुद्याः प्रारम्भतेऽर्थम् ॥

नत्वा सरस्वतीं देवीं शुद्धां गुण्यां करोम्यहम् ।
पाणिनीय प्रवेशाय लघुसिद्धान्त कौमुदीम् ॥

अहं लघुसिद्धान्तकौमुदीं करोमि, किं कृत्वा, सरस्वतीं देवीं, नत्वा, कस्मै प्रयोजनाय पाणिनीयप्रवेशाय, कीदृशीं सरस्वतीं देवीं शुद्धाम्-पुनः कीदृशीं सरस्वतीं देवीं गुण्यामिति ।

अहं वरदराचार्यः, सिद्धोऽन्तो येषान्ते सिद्धान्ताः कौ पृथिव्यां मोदन्ते जना कुमुदः, कुमुदस्य इयं कौमुदी, सिद्धान्त कौमुदीव, (मोदनं मुत् कौ पृथिव्यां मुतः आनन्दो यस्मात् कुमुद चन्द्रः तस्येयं शक्तिः कौमुदी) कौमुदी, सिद्धान्त (लघ्वी चासौ सिद्धान्त कौमुदी, लघुसिद्धान्त कौमुदी लघुसिद्धान्त कौमुदीम्, एतन्नामकग्रन्थम् . करोमि, कि किं कृत्वा सरस्वतीं देवीं नत्वा, प्रणम्य, कस्मै प्रयोजना

पणः सोऽस्यास्तीति पणी तस्य गोत्रापत्यं पाणिनी, पाणिनिना प्रोक्तं पाणिनीयं पाणिनि प्रणीतं व्याकरणं तस्मिन् बुद्धेः प्रवेशार्थ मिति) पाणिनीय प्रवेशाय, कीदृशीं सरस्वतीं देवीं शुद्धांशुद्ध-स्वरूपाम्, पुन कीदृशीं सरस्वतीं गुण्याम् (प्रशस्ता गुणा यस्याः सा ताम्) प्रशंसनीय गुणयुक्ताम् । अहम् (मैं वरदराचार्य) लघुसिद्धान्त कौमुदीं (लघुसिद्धान्त कौमुदी को) करोमि (बनाता हूँ) किं कृत्वा (क्या करके) सरस्वतीं देवीं (सरस्वती देवी को) नत्वा (नमस्कार करके) कस्मै प्रयोजनाय (किस प्रयोजन के लिये) पाणिनीय प्रवेशाय (पाणिनीय व्याकरण में प्रवेश होने के लिये ' कीदृशीं सरस्वतीं देवीम् (कैसी सरस्वती देवी है) शुद्धाम (शुद्ध स्वरूप वाली है) पुन. कीदृशीम् (पुन कैसी है) गुण्याम (प्रशंसनीय गुण वाली है) ।

अ इ उ ण् । ऋ ऌ क् । ए ओ ङ् । ऐ औ च् । ह य व र ट् । ल ण् । ञ म ङ ण न म् । झ भ ञ् । घ ढ ध ष् । ज ब ग ड द श् । ख फ छ ठ थ च ट त व् । क प य् । श ष स र् । ह ल् ॥

इति माहेश्वराणि सूत्राण्यणादि संज्ञार्थानि ।

महेश्वरात् आगतानि माहेश्वराणि इति, इस प्रकार महेश्वर से प्राप्त हुए जो चौदह सूत्र वे अण् अक् अच् अल् आदि संज्ञा के लिये हैं ।

अण् आदिर्यान्तोता अणादयः। अणादयश्चताः संज्ञाश्च

अणादि संज्ञाज्ञाभ्य इमानि, अणादि संज्ञार्थानि।

एषामन्त्या इतः।

इन चौदह सूत्रों के अन्त्य वर्ण इत्संज्ञक हैं।

हकारादिष्वकार उच्चारणार्थः

हकार आदि सूत्रों में जो अकार वह उच्चारण के लिये है।

लण् मध्ये त्वित्संज्ञकः।

लण् सूत्र के मध्य में जो अकार वह इत्संज्ञक है।

हलन्त्यम्। १। ३। ३॥

उपदेश अवस्था में जो अन्त्य हल वह इत्संज्ञक होय।

उपदेश आद्योच्चारणम्।

पाणिनि, कात्यायनि, पतञ्जलि, का जो आदि उच्चारण

कथन उसको उपदेश कहते हैं।

सूत्रेष्वदृष्टं पदं सूत्रान्तरादनुवर्तनीयं सर्वत्र।

सूत्रों में जो अदृष्ट पद वह अन्य सूत्रों से सब सूत्रों में

अनुवर्तन करना चाहिये।

अदर्शनं लोपः। १। १। ६०॥

विद्यमान का जो अदर्शन वह लोप संज्ञक होता है।

तस्य लोपः। १। ३। ९॥

इत् संज्ञक वर्णों का लोप होता है।

णादयोऽणाद्यर्थाः।

णकार आदि जो अनुबन्ध हैं वे अणादि संज्ञा के लिये हैं

आदिरन्त्येनसहेता १। १। ७१॥

अन्त्य इत् सहित करके सहित जो आदि वर्ण वह मध्य वर्णों की और अपनी संज्ञा का बोधक होता है।

यथाऽणिति अ इ उ वर्णानां संज्ञा

जैसे अण् कहने पर अ इ उ वर्णों की संज्ञा होती है।

एवमक् अच् हल् अलित्यादयः।

वैसे ही अक अच् हल हश् झर अल् आदि ब्यालीस प्रकार के प्रत्याहार जानना।

ऊकालोऽज्झ्रस्वदीर्घप्लुतः १। २। २७॥

उ ऊ ऊ३ इन उकार त्रय के उच्चारण के सदृश उच्चारण काल है जिस अच का वह अच क्रम से ह्रस्व, दीर्घ प्लुत संज्ञक होता है।

स प्रत्येकमुदात्तानुदात्तस्वरितभेदेन त्रिधा ।
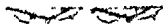
यह प्रत्येक अच उदात्त अनुदात्त स्वरित के भेद से तीन प्रकार का है ।

उच्चैरुदात्तः । १ । २ । २९ ॥

ताल्वादि सभाग स्थानों में ऊर्ध्व भाग से उच्चार्यमाण जो अच वह उदात्त संज्ञक होय ।

नीचैरनुदात्तः १ । २ । ३० ॥

ताल्वादि सभाग स्थानों में अधोभाग से उच्चार्यमाण जो अच वह अनुदात्त संज्ञक होय ।

समाहारः स्वरितः । १ । २ । ३१ ॥

उदात्तत्व, अनुदात्तत्व, वर्ण धर्म समाहित हों जिस अच में वह अच स्वरित संज्ञक होता है ।

स नवविधोऽपि प्रत्येकमनुनासिकाननुनासिकत्वाभ्यां द्विधा

और वह अच नौ प्रकार का होता हुआ भी प्रत्येक अच अनु-नासिक, अननुनासिक भेद से दो प्रकार का है ।

मुखनासिकावचनोऽनुनासिकः १ । १ । ८ ॥

मुख सहित नासिका का उच्चार्यमाण जो वर्ण वह अनु-नासिक संज्ञक होता है ।

इ चु यशानां तालुः ।

इ, च, छ, ज, झ, ञ, य, श, इनका तालु स्थान है ॥

ऋ टु रषाणां मूर्धा ।

ऋ, ट, ठ, ड, ढ, ण, र,ष, इनका मूर्धा स्थान है ॥

ऌ तु लसानां दन्ताः ।

ऌ त थ, द, ध, न, ल, स, इनका दन्त स्थान है ॥

उ पू पध्मानोयानामोष्ठौ ।

उ, प, फ, ब, भ, म, उपध्मानियों का ओष्ठ स्थान है ॥

ञ म, ङ, ण, ना नां नासिका च

ञ, म, ङ, ण, न इनका नासिका स्थान है और चकार से अपने अपने वर्ग स्थानी कण्ठ तात्वादि स्थान भी है ॥

एदैतोः कण्ठ तालु ।

ए, और ऐ का कण्ठ तालु स्थान है ॥

ओदौतोः कण्ठोष्ठम् ।

ओ, और औ का कण्ठोष्ठ स्थान है ॥

वकारस्य दन्तोष्ठम् ।

वकार का दन्तोष्ठ स्थान है ॥

जिह्वामूलीयस्य जिह्वामूलम् ।

तदित्थम्—अ इ उ ऋ वर्णानांप्रत्येकमष्टादशभेदाः

सो इस प्रकार अ इ उ ऋ यह प्रत्येकवर्ण अठारह प्रकार का होता है।

ऌवर्णस्य द्वादशः।

ऌवर्ण की बारह प्रकार की संज्ञा होती है॥

तस्य दीर्घाभावात्।

उसको दीर्घ न होने से॥

एचामपि द्वादशः।

एच् (ए, ओ, ऐ, औ) भी बारह प्रकार के हैं॥

तेषां ह्रस्वाभावात्।

उनके मध्य में ह्रस्व न होने से।

तुल्यास्य प्रयत्नं सवर्णम्। १। १। ९।

जिस वर्ण के ताल्वादि स्थान और आभ्यन्तर प्रयत्न यह वर्ण परस्पर सवर्ण संज्ञक होता है॥

ऋ, ऌ वर्णयोर्मिथः सावर्ण्यवाच्यम्।

ऋकार और ऌकार की परस्पर सवर्ण संज्ञा कहनी चाहिए।

अकुह विसर्जनीयानां कण्ठः।

अठारह प्रकार के अ, कवर्ग (क, ख, ग, घ, ङ) हकार और विसर्ग इनका कण्ठ स्थान है॥

इ चु य शानां तालु ।

इ, च, छ, ज, झ, ञ, य, श, इनका तालु स्थान है ॥

ऋ टु र षाणां मूर्धा ।

ऋ, ट, ठ, ड, ढ, ण, र, ष, इनका मूर्धा स्थान है ॥

लृ तु लसानां दन्ताः ।

लृ, त, थ, द, ध, न, ल, स, इनका दन्त स्थान है ॥

उ पू पध्मानीयानामोष्ठौ ।

उ, प, फ, ब, भ, म, उपध्मानियों का ओष्ठ स्थान है ॥

ञ म, ङ, ण, ना नां नासिका च

ञ, म, ङ, ण, न इनका नासिका स्थान है और चकार से अपने अपने वर्ग स्थानों कण्ठ ताल्वादि स्थान भी है ॥

एदैतोः कण्ठ तालु ।

ए, और ऐ का कण्ठ तालु स्थान है ॥

ओदौतोः कण्ठोष्ठम् ।

ओ, और औ का कण्ठोष्ठ स्थान है ॥

वकारस्य दन्तोष्ठम् ।

वकार का दन्तोष्ठ स्थान है ॥

जिह्वामूलीयस्य जिह्वामूलम् ।

जिह्वामूलीय का जिह्वामूल स्थान है ॥

नासिकाऽनुस्वारस्य ।

अनुस्वार का नासिका स्थान है ॥

यत्नो द्विधा, आभ्यन्तरो बाह्यश्च ।

प्रयत्न दो प्रकार के हैं, आभ्यन्तर और बाह्य ॥

आद्यः पंचधा स्पृष्टेषत्स्पृष्टेषद्विवृतविवृतसंवृतभेदात् ।

प्रथम पांच प्रकार का है। स्पृष्ट, ईषत्स्पृष्ट, ईषद्विवृत, विवृत, संवृत, भेद से ॥

तत्र स्पृष्टं प्रयत्नं स्पर्शानाम् ।

उन प्रयत्नों में स्पृष्ट, प्रयत्न स्पर्शों का है (क से म तक)

ईषत्स्पृष्टं मन्तःस्थानाम् ।

अन्तस्थों (य र ल व) का ईषत्स्पृष्ट प्रयत्न है ॥

ईषद्विवृतमूष्मणाम् ।

ऊष्माओं (श ष स ह) का ईषद्विवृत प्रयत्न है ॥

विवृतं स्वराणाम् ।

स्वरों (अ, इ, उ, ऋ, लृ, ए, ओ, ऐ, औ) का विवृत प्रयत्न है ॥

ह्रस्वस्यावर्णस्य प्रयोगे संवृतम् ।
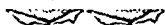
ह्रस्व अवर्ण के प्रयोग में (अ, अ,) संवृत प्रयत्न होता है॥

प्रक्रिया दशायान्तु विवृतमेव।

साधनावस्था में विवृत का विवृत प्रयत्न हो जाता है॥

बाह्य प्रयत्नस्त्वेकादशधा।

बाह्य प्रयत्न ग्यारह प्रकार के हैं॥

* विवारः संवारः श्वासो नादो घोषोऽघोषोऽल्पप्राणो महाप्राण उदात्तोऽनुदात्तः स्वरित श्चेति *

विवार, सम्वार, श्वास, नाद, घोष, अघोष, अल्पप्राण, महाप्राण, उदात्त, अनुदात्त, स्वरितः भेद हैं॥

* खरो विवाराः श्वासा अघोषाश्च *

खर प्रत्याहारों का विवार श्वास, अघोष, प्रयत्न है॥

हशः संवारा नादा घोषाश्च।

हश प्रत्याहारों का संवार, नाद, घोष, प्रयत्न है॥

* वर्गाणां प्रथम तृतीय पंचमा यणश्चाल्पप्राणाः *

वर्गों (चवर्ग, पवर्गादि) के प्रथम तृतीय पंचम वर्ण (क, ग, ङ, इत्यादि) और यण (य र ल व) ये अल्पप्राण संज्ञक होते हैं।

वर्गाणां द्वितीय चतुर्थौ शल्श्च महाप्राणाः।

वर्गों के (कवर्गादि) द्वितीय चतुर्थ वर्ण (ख, घ इत्यादि
और शल प्रत्याहार (श ष स ह) ये महाप्राण संज्ञक होते हैं ।

कादयो मावसानाः स्पर्शाः ।

क से लेकर मकार पर्यन्त वर्ग स्पर्श संज्ञक हैं ॥

यणोऽन्तःस्थाः ।

यण प्रत्याहार (य र ल व) अन्तस्थ संज्ञक होते हैं ॥

शल ऊष्माणः ।

शल प्रत्याहार ऊष्मा संज्ञा वाले हैं ॥

अचः स्वराः ।

अच प्रत्याहार स्वर संज्ञक होते हैं ।

≍ क ≍ ख इति कखाभ्यां प्रागर्धविसर्गसदृशो जिह्वामूलीयः

क ख, से पूर्व अर्ध विसर्ग सदृश चिन्ह जिह्वामूलीय संज्ञा
वाले हैं ।

≍ प ≍ फ इति पफाभ्यां प्रागर्धविसर्गसदृश उपध्मानीयः

प फ से पूर्व अर्ध विसर्ग सदृश चिन्ह उपध्मानीय संज्ञा वाले हैं ॥

अं अः इत्यचः परावनुस्वार विसर्गौ ।

अं अः इस अच से परे अनुस्वार और विसर्ग होते हैं ॥

[illegible] शास्त्रगतः [illegible] । [illegible] । ११ ॥

जो प्रकृति से किया जाय उसको प्रत्यय कहते हैं ॥
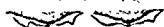
उसी का नाम विधीयमान, आदेश भी है। अविधीयमान जो अण् (प्रत्याहार) और उदित वे सवर्ण संज्ञा वाले हों ॥

अत्रैवाण् परेण णकारेण ।

इस सूत्र में ही अण् प्रत्याहार पर णकार तक जानना ॥

कु चु टु तु पु एते उदितः ।

कु चु टु तु पु ये उदित संज्ञा वाले होते हैं ॥

तदेवम् अ इत्यष्टादशानां संज्ञा ।

सो इस प्रकार अकार अठारह प्रकार की संज्ञा वाला होता है ॥

तथेकारोकारौ ।

उसी प्रकार इकार उकार भी अष्टादश प्रकार की संज्ञा वाले हैं ॥

ऋकार स्त्रिंशतः

ऋकार तीस प्रकार की संज्ञा वाला है। (क्योंकि परस्पर सवर्ण संज्ञा होने से ऋ की अठारह और लृकार की बारह प्रकार की संज्ञा को जोड़ने से कुल तीस होते हैं)

एवं लृकारोऽपि ।

इसी प्रकार लृ भी तीस प्रकार की संज्ञा वाला है ॥

एचो द्वादशानाम् ।

एच प्रत्याहार बारह प्रकार की संज्ञा वाले हैं ॥

अनुनासिकानुनासिकभेदेनयवलाद्विधा ।

अनुनासिक और अननुनासिक भेद से य, व, ल दो प्रकार के हैं ॥

तेनाऽननुनासिकास्तेद्वयोर्द्वयो स्संज्ञा ।

उस हेतु से अनुनासिक और अननुनासिक संज्ञ य व ल दो दो की संज्ञा को ग्रहण करने वाले होते हैं ॥

परः सन्निकर्षः संहिता । १ । ४ । १०६ ।

वर्णों की अति समता से जो सन्निधि (समीप समीप उच्चारण) वह संहिता संज्ञक होय ॥

हलोनन्तराः संयोगः । १ । १ । ७ ॥

अचों से रहित जो हल वर्ण हैं वह संयोग संज्ञा वाले होते हैं ।

सुप्तिङन्तं पदम् । १ । ४ । १४ ॥

सुबन्त और तिङन्त शब्द पद संज्ञक होते हैं ॥

इति संज्ञाप्रकरणम् ॥

॥ अथ अच सन्धि प्रकरणम् ॥

इकोयणचि ६ । १ । ७७ ॥

इक (अच्याचार) के स्थान में यण होय अच परे संहिता के विषय में ।

तस्मिन्निति निर्दिष्टे पूर्वस्य । १ । १ । ६६ ॥

सप्तमी निर्देश करके क्रियमाण जो कार्य वह अन्य वर्णों से व्यवधान रहित पूर्व को जानना चाहिये ।

स्थानेऽन्तरतमः । १ । १ । ५० ॥

एक वर्ण के स्थान में जहां अनेक वर्णों की प्राप्ति हो वहां जो अत्यन्त सदृश हो वह ही आदेश होय ।

यत्रानेक विध मान्तर्यं तत्र स्थानतआन्तर्यंबलीयः ।

जहां अनेक विधी (स्थानार्थ गुण प्रमाणश्च) प्राप्त हो वहां स्थानकृत बलवान होती है ।

अनचि च । ८ । ४ । ४७ ॥

अच से परे यर को विकल्प से द्वित्व होय अच परे न होय तो

झलां जश् झशि । ८ । ४ । ५३ ॥

झलों को जश होय झश परे रहते ।

संयोगान्तस्य लोपः । ८ । २ । २३ ॥

संयोगान्त जो पद उसका लोप होय ।

अलोऽन्त्यस्य । १ । १ । ५२ ॥

षष्ठ्यन्त पद में निर्दिष्ट जो कार्य वह अन्त अल के स्थान में आदेश होय ।

यणः प्रतिषेधो वाच्यः ।

यणों के लोप का प्रतिषेध कहना चाहिये ।

एचोऽयवायावः । ६ । १ । ७८ ॥

एच् प्रत्याहारों को क्रम से अय्, अव्, आय्, आव् आदेश होय अच् परे रहते ।

यथासंख्य मनुदेशः समानाम् । १ । ३ । १० ॥

बराबर की विधी यद् यथा क्रम से होय ।

वान्तो यि प्रत्यये । ६ । १ । ७९ ॥

यकारादि प्रत्यय परे होय तो ओ, औ को अव्, आव् आदेश होय ।

अध्व परिमाणे च ।

मार्ग के परिमाण में यूति शब्द परे रहते गो शब्द के अवयव ओकार को अव् आदेश होय ।

अदेङ् गुणः । १ । १ । २ ॥

अ और एङ् प्रत्याहार गुण संज्ञक होय ॥

तपरस्तत्कालस्य । १ । १ । ७० ॥

त है परे जिससे और तसे परे उच्चार्य माण जो वर्ण वह समकाल का बोधक होता है ।

आद्गुणः । ६ । १ । ८७ ॥

अवर्ण से अच परे होय तो पूर्व परके स्थान में गुणरूप एकादेश होय ।

उपदेशेऽजनुनासिक इत् । १ । ३ । २ ॥

उपदेश अवस्था में अनुनासिक जो अच वह इत्संज्ञक होय।

प्रतिज्ञाऽनुनासिक्याः पाणिनीयाः ।

पाणिनीय, कात्यायनी, पतंजलि आदि मुनियों ने अनुनासिक जो वर्ण कहे हैं वे ही गुरुपरम्परा से अनुनासिक जाने जाते हैं।

लण्सूत्रस्थावर्णेन सहोच्चार्यमाणो रेफो रलयोः संज्ञा ।

लण सूत्र में स्थित अवर्ण के साथ उच्चार्यमाण जो रेफ वह र, ल की संज्ञा का बोधक होता है।

उरण् रपरः । १ । १ । ५१ ॥

ऋ की तीस प्रकार की संज्ञा कही है उसके स्थान में जायमान जो अण वह रपर होता हुआ प्रवृत्त हो।

लोपः शाकल्यस्य । ८ । ३ । १९ ॥

अवर्ण पूर्वक पदान्त के वकार यकार का लोप होय अश (प्रत्याहार) परे विकल्प से शाकल्य के मत में।

पूर्वत्रासिद्धम् । ८ । २ ॥ १ ॥

सपाद सप्ताध्यायी सूत्रों के प्रति त्रिपादी सूत्र असिद्ध है, और त्रिपादी सूत्रों में भी पूर्व सूत्र के प्रति पर सूत्र असिद्ध है

अथ संधिः

(अर्थात् १-१-१ सूत्र से ८।१ सूत्रों तक सपाद सप्ताध्यायी है और ८।२ से लेकर ८।४ तक के सूत्र त्रिपादी होते हैं।

वृद्धिरादैच् । १ । १ । १ ॥

आ और ऐच प्रत्याहार वृद्धि संज्ञक होय।

वृद्धिरेचि । ६ । १ । ८८ ॥

अवर्ण से एच परे पूर्व पर के स्थान में वृद्धि रूप एकादेश होय।

एत्येधत्यूठ्सु । ६ । १ । ८९ ॥

अवर्ण से एच (प्रत्याहार) है आदि में जिसके ऐसी गत्यर्थक (इणगतौ) एधति (एध धातु) और ऊठ शब्द परे हो तो पूर्व पर स्थान में वृद्धि रूप एकादेश होय।

अक्षादूहिन्यामुपसंख्यानम्।

अक्ष सम्बन्धि अवर्ण से परे ऊहिनी सम्बन्धी अच परे रहते पूर्व पर के स्थान में वृद्धि रूप एकादेश होय।

प्रादूहोढोढ्येषैष्येषु।

प्र शब्द के अवर्ण से ऊह, ऊढ, ऊढि, एष, एष्य इनके अच परे रहते वृद्धि रूप एकादेश होय।

ऋते च तृतीया समासे।

अवर्ण से ऋत परे तृतीया समास में वृद्धिरूप एकादेश हो।

प्रवत्सतर कम्बल वसनार्ण दशानामृणे।

प्र, वत्सतर, कम्बल, वसन, ऋण, दशन इन शब्दों के

अच्सन्धिः
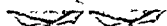
अवर्ण से ऋण शब्द परे होय तो वृद्धिरूप एकादेश होय।

उपसर्गाः क्रियायोगे । १।४।५६ ॥

प्र परादि क्रिया के योग में उपसर्ग संज्ञक होते हैं।

भूवादयो धातवः । १।३।१ ॥

क्रियावाची जो भूवादि वे धातु संज्ञक होते हैं।

उपसर्गादृति धातौ । ६।१।६१ ॥

अवर्णान्त उपसर्ग से ऋकारादि धातु परे होय तो पूर्व पर के स्थान में वृद्धिरूप एकादेश होय।

एङि पररूपम् । ६।१।६४ ॥

अवर्णान्त उपसर्ग से एङादि धातु परे हो तो पर रूप एकादेश होय।

अचोऽन्त्यादि टि । १।१।६४ ॥

अचों के मध्य में जो अन्त्य अच वह है आदि में जिसके वह समुदाय टी संज्ञक होय।

शकन्ध्वादिषु पर रूपं वाच्यम् ।

शकन्ध्वादियों में टी को पर रूप कहना चाहिये।

ओमाङोश्च । ६।१।६५ ॥

अवर्ण से ओम आङ परे रहते पर रूप एकादेश होय।

अन्तादिवत। ६।१।८५॥

जो यह एकादेश है वह पूर्व के अन्तवत् और पर के आदिवत् होता है।

अकः सवर्णे दीर्घः। ६।१।१०१॥

अक प्रत्याहार से सवर्ण अच परे पूर्व पर के स्थान में दीर्घ रूप एकादेश हो।

एङः पदान्तादति। ६।१।१०९॥

पदान्त एङ से अत परे पूर्व रूप एकादेश हो।

सर्वत्र विभाषा गोः। ६।१।१२२॥

लोक और वेद में एङन्त गो शब्द को प्रकृति भाव हो अत परे विकल्प से पदान्त में।

अनेकाल्शित्सर्वस्य। १।१।५५।

अनेकाल अल वाला आदेश और शित आदेश संपूर्ण के स्थान में होते हैं।

ङिच्च। १।१।५३॥

ङित जो अनेकाल आदेश वह अन्त्य को होय।

अवङ् स्फोटायनस्य। ६।१।१२३॥

पदान्तमें एङन्त गो शब्द को अवङ आदेश होय अच परे विकल्प से स्फोटायन के मत में।
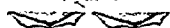
इन्द्रे च। ६।१।१२४ ॥

गो शब्द को अवङ आदेश होय इन्द्र शब्द परे।

दूराद्धूते च। ८।२।८४ ॥

दूर से संबोध में (प्रेरणा करने में) वाक्य की जो टि वह प्लुत संज्ञक होय विकल्प से।

प्लुत प्रगृह्या अचि नित्यम्। ६।१।१२५ ॥

प्लुत संज्ञक और प्रगृह्य संज्ञक को नित्य ही प्रकृति भाव होय अच परे।

ईदूदेद्द्विवचनं प्रगृह्यम्। १।१।११ ॥

ईदन्त, ऊदन्त, एदन्त, जो द्विवचन वह प्रगृह्य संज्ञक होय।

अदसो मात्। १।१।१२ ॥

अदस शब्द के मकार से परे ईत ऊत प्रगृह्य संज्ञक हो।

चादयोऽसत्त्वे। १।४।५७ ॥

अद्रव्यार्थक चादि निपात संज्ञक हो।

प्रादयः। १।४।५८ ॥

अद्रव्यार्थक प्रादि भी निपात संज्ञक होय।

निपात एकाजनाङ्। १।१।१४ ॥

एक अच जो निपात वह आङ को छोड़ कर प्रगृह्य संज्ञक होय।

अर्थ संग्रहः

वाक्य स्मरण योरद्वित् ।

वाक्य और स्मरण में आड् डित भिन्न जानना चाहिये ।

ओत् । १।१।१५ ॥

ओदन्त जो निपात वह प्रगृह्य संज्ञक हो ।

सम्बुद्धौ शाकल्यस्येतावनार्षे । १।१।१६ ॥

सम्बुद्धि निमित्तक ओकार प्रगृह्य संज्ञक होय अवैदिक इत परे विकल्प से शाकल्य के मत में ।

मय उञो वो वा । ८।३।३३ ॥

मय से परे उञ को वकार होय विकल्प से अच परे रहते

इकोऽसवर्णे शाकल्यस्य ह्रस्वश्च । ६।१।१२७ ॥

पदान्त इक को ह्रस्व होय विकल्प से असवर्णी अच परे रहते शाकल्य के मत से ।

ह्रस्वविधि सामर्थ्यान्नस्वरसंधिः ।

ह्रस्व विधी सामर्थ्य से स्वर संधि नहीं होती है ।

अचो रहाभ्यां द्वे । ८।४।४६ ॥

अच से परे जो रेफ, हकार, उससे परे जो यर उसको द्वित्व होय विकल्प से ।

• नसमासे •

होय समास में ।

हलसन्धिः
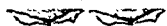
ऋत्यकः । ६।१।१२८ ॥

पदान्त अक को ह्रस्व होय विकल्प से ऋत परे रहते ।

इत्यच्सन्धिः

ॐ अथ हल्संधि प्रकरणम् ॐ

स्तोः श्चुना श्चुः । ८।४।४० ॥

(दन्ती) सकार तवर्ग को (तालवी) शकार चवर्ग के योग में (तालवी) शकार और चवर्ग होय ।

शात् । ८।४।४४ ॥

(तालवी) शकार से परे तवर्ग को श्चुत्व न होय ।

ष्टुना ष्टुः । ८।४।४१ ॥

(दन्ती) सकार तवर्ग को (मूर्धनी) षकार टवर्ग के योग मे (मूर्धनि) षकार टवर्ग होय ।

न पदान्ताट्टोरनाम । ८।४।४२ ॥

पदान्त टवर्ग से परे नाम भिन्न (दन्ती) सकार तवर्ग को (मूर्धनि) षकार टवर्ग न होय ।

• अनाम्नवति नगरीणामितिवाच्यम् । •

पदान्त टवर्ग से परे नाम भिन्न नवति भिन्न नगरी भिन्न (दन्ती) सकार तवर्ग को (मूर्धनि) षकार टवर्ग का निषेध कहना चाहिये ।

तोःषि । ८।४।४३ ॥

तवर्ग को ष्टुत्व (टवर्ग) न होय षकार परे।

झलां जशोऽन्ते । ८।२।३९ ॥

पदान्त में झलों (प्रत्याहार) को जश (प्रत्याहार) होय।

यरोऽनुनासिकेऽनुनासिको वा। ८।४।४५ ॥

पदान्त यर को अनुनासिक होय अनुनासिक परे विकल्प से

* प्रत्यये भाषायां नित्यम् *

प्रत्यय में और भाषा में पदान्त यर को नित्य ही अनुनासिक होय।

तोर्लि । ८।४।६० ॥

तवर्ग को लकार परे पर सवर्ण होय।

उदःस्थास्तम्भोः पूर्वस्य । ८।४।६१ ॥

उद् से परे स्था और स्तम्भ को पूर्व सवर्ण होय।

तस्मादित्युत्तरस्य । १।१।६७ ॥

पंचमी निर्देश करके विधीयमान जो कार्य वह अन्य वर्णों का व्यवधान रहित पर को होय।
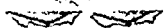
आदेः परस्य । १।१ ५४ ॥

पर को विहित जो कार्य वह उसके आदि को होय।

झरोझरि सवर्णे । ८।४।६५ ॥

हल से परे झर का लोप सवर्णी झर परे रहते विकल्प से

खरि च । ८।४।५५ ॥

झलों को चर होय खर परे रहते ।

झयो हो ऽन्यतरस्याम् । ८।४।६२ ॥

झय से परे हकार को पूर्व सवर्ण हो विकल्प से ।

शश्छोऽटि । ८।४।६३ ॥

झय से परे शकार को छकार होय विकल्प से अट परे ।

* छत्वममीति वाच्यम् *

झय से परे शकार को छकार हो विकल्प से अम परे ।

मोऽनुस्वारः । ८।३।२३ ॥

मान्त पद को अनुस्वार होय हल परे होय तो ।

नश्चा पदान्तस्य झलि । ८।३।२४ ॥

अपदान्त नकार मकार को अनुस्वार हो झल परे होय तो

अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः । ८।४।५८ ॥

अनुस्वार को पर सवर्ण होय यय प्रत्याहार परे रहते ।

वापदान्तस्य । ८।४।५९ ॥

पदान्त अनुस्वार को पर सवर्ण होय यय परे विकल्प से।

मो राजि समः क्वौ । ८।३।२५ ॥

क्विबन्त राजति धातु परे रहते सम के म को म होय।

हे मपरे वा । ८।३।२६ ॥

म है परे जिससे ऐसा हकार परे होय तो म को म होय।

* यवल परे यवला वा *

य, व ल, है परे जिससे ऐसा हकार परे होय तो क्रम से य, व,ल, होय विकल्प से ।

न परे नः । ८।३।२७ ॥

नकार है परे जिससे ऐसा हकार परे रहते म को न होय विकल्प से।

आद्यन्तौ टकितौ । १।१।४६ ॥

टित कित जिसको होय क्रमसे आदि और अन्त के अवयव होते हैं।

ङ्णोः कुक् टुक् शरि । ८।३।२८ ॥

ङकार णकार को कुक टुक का आगम हो शर परे विकल्प से।
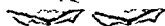
॰ चयो द्वितीयाः शरि पौष्करसादेरितिवाच्यम् ॰

चयों को द्वितीय अक्षर होय शर परे विकल्प से पौष्कर सादि के मत से।

ङः सि धुट्। ८।३।२६॥

डकार से परे सकार को धुट का आगम हो विकल्प से।

नश्च। ८। ३। ३०॥

नान्त से परे सकार को धुट का आगम हो विकल्प से।

शि तुक्। ८।३।३१॥

पदान्त नकार को शकार परे तुक का आगम हो विकल्प से।

ङमो ह्रस्वादचि ङमुण्नित्यम्। ८। ३। ३२॥

ह्रस्व से परे जो ङम तदन्त जो पद उससे परे अच को ङुट् णुट् नुट् का आगम होय।

समः सुटि। ८। ३। ५॥

सम के मकार को रु होय सुट् परे।

अत्रानुनासिकः पूर्वस्य तु वा। ८। ३। २॥

यहां रु के प्रकरण में रु से पूर्ववर्ण को अनुनासिक होय विकल्प से।

अनुनासिकात्परोऽनुस्वारः । ८ । ३ । ४ ॥

अनुनासिक को छोड़कर रु के पूर्ववर्ण से परे अनुस्वार का आगम होय ।

खरवसानयोर्विसर्जनीयः । ८ । ३ । १५ ॥

खर परे और अवसान परे पदान्त रेफ कूं विसर्ग होय ।

✲ सम्पुंकानां सोवक्तव्यः ✲

सम, पुम, कान शब्दों के विसर्गों को सकार होय ।

पुमः खय्यम्परे । ८ । ३ । ६ ॥

अम है परे जिसमे ऐसा खय परे होय तो पुम के म को रु होय ।

नश्छव्यप्रशान् । ८ । ३ । ७ ॥

अम है परे जिसमें ऐसा छव परे होय तो नान्त पद को रु होय प्रशान शब्द को छोड़ कर ।

विसर्जनीयस्य सः । ८ । ३ । ३४ ॥

खर परे विसर्गों को सकार होय ।

नॄन्पे । ८ । ३ । १० ॥

नॄन शब्द के नकार को रु होय पकार परे होय तो ।

अथ समदः

वा शरि । ८ । ३ । ३६ ॥

शर परें होय तो विसर्गों को विसर्ग होय विकल्प में ।

ससजुषो रुः । ८ । २ । ६६ ॥

पदान्त सकार और सजुष शब्द के सकार को रु होय ।

अतो रोरप्लुतादप्लुते । ६ । १ । ११३ ॥

अप्लुत अत से परे रु को उ होय अप्लुत अत परे रहते ।

हशि च । ६ । १ । ११४ ॥

अप्लुत अतसे परे रु को उ होय हश परें ।

भो भगो अघो अपूर्वस्य योऽशि । ८ । ३ । १७ ॥

भोपूर्वक भगोपूर्वक अघोपूर्वक अवर्णपूर्वक रु को य—
होय अश परें रहते ।

हलि सर्वेषाम । ८ । ३ । २२ ॥

भो पूर्वक भगो पूर्वक अघो पूर्वक अवर्ण पूर्वक य का
लोप होय हल परें रहते सबके मत में ।

रोऽसुपि । ८ । २ । ६९ ॥

अहन शब्द के नकार को रेफ होय, सुप परे न होय ।

रो रि । ८ । ३ । १४ ॥

रेफ का लोप होय रेफ परे होय तो ।

ॐ अथ अजन्तपुंल्लिंग प्रकरणम् ॐ

अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम् १ । २ । ४५ ।

धातु प्रत्यय प्रत्ययान्त तदादि को छोड़ कर अर्थवान् जो शब्द स्वरूप वह प्रातिपदिक संज्ञक होय ।

कृत्तद्धितसमासाश्च १ । २ । ४६ ॥

कृदन्त, तद्धितान्त, समास भी प्रातिपदिक संज्ञक होय ।

स्वौजसमौट्छष्टाभ्याम्भिस्ङेभ्याम्भ्यस्

ङसिभ्याम्भ्यस्ङसोसाम्ङ्योस्सुप् । ४ । १ । २ ॥

सु औ जस, अम औट शस, टा भ्याम भिस, ङे भ्याम भ्यस, ङसि भ्याम भ्यस, ङस ओस आम, ङि ओस सुप, क्रम से प्रथमा द्वितीया तृतीया चतुर्थी पंचमी षष्ठी सप्तमी (विभक्ति) संज्ञक होय ।

ङ्याप्प्रातिपदिकात् ४ । १ । १ ॥

प्रत्ययः ३ । १ । १ ॥ परश्च ३ । १ । २ ॥

ङ्यन्त आबन्त और प्रातिपदिक शब्दों से परे स्वादि प्रत्यय होय ।

सुपः । १ । ४ । १०३ ॥

अर्थ

बहुषु बहुवचनम् । १ । ४ । २१ ॥

बहुत्व की विवक्षा में बहुवचन होय।

चुटू । १ । ३ । ७ ॥

प्रत्यय आदि जो चवर्ग टवर्ग वे इत्संज्ञक होय।

विभक्तिश्च । १ । ४ । १०४ ॥

सुप और तिङ विभक्ति संज्ञक होंय।

न विभक्तौ तुस्माः १ । ३ । ४ ॥

विभक्ति में स्थित तवर्ग सकार मकार यह इत्संज्ञक न।

एकवचनं संबुद्धिः २ । ३ । ४९ ॥

सम्बोधन में प्रथमा का एक वचन यह संबुद्धि संज्ञक।

यस्मात्प्रत्ययविधिस्तदादि प्रत्ययेऽङ्गम् १ । ४ । १३

जो प्रत्यय जिस शब्द से करते हो वह आदि में है जिसका ऐसा जो शब्द स्वरूप उस प्रत्यय के परे अंग संज्ञक होय।

एङ्ह्रस्वात्सम्बुद्धेः ६ । १ । ६९ ॥

एङन्त और ह्रस्वान्त अंग से परे संबुद्धि अवयव हल लोप होय।

अमि पूर्वः ६ । १ । १०७ ॥

अक से अम सम्बन्धि । अच परे पूर्वरूप एकादेश होय

लशक्वतद्धिते । १ । ३ । ८ ॥

तद्धित को छोड़कर प्रत्यादि ल-श कवर्ग इत्संज्ञक होय।

तस्माच्छसो नः पुंसि । ६ । १ । १०३ ॥

पूर्व सवर्ण दीर्घ से परे जो शस का सकार उसकूं नकार होय पुंल्लिंग में।

अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि ८ । ४ । २ ॥

अट् कवर्ग, पवर्ग आङ् नुम ये पृथक्-पृथक् हो या यथा सम्भव मिले हुए होवो र, ष से परे न को ण हो समान पद में।

पदान्तस्य । ८ । ४ । ३७ ॥

पदान्त नकार कूं णकार होय।

टाङसिङसामिनात्स्याः । ७ । १ । १२ ॥

अदन्त अंग से परे टा, ङसि, ङस इनको आन् स्य आदेश होय।

सुपि च । ७ । ३ । १०२ ॥

अदन्त अंग का दीर्घ होय यञादि सुप परें रहते।

अतो भिस ऐस् । ७ । १ । ९ ॥

अदन्त अंग से परे भिस् कूं ऐस् आदेश होय।

ङेर्यः । ७ । १ । १३ ॥

अदन्त अंग से परें ङे को य आदेश होय।

स्थानिवदादेशोऽनल्विधौ । १ । १ । ५९ ॥

आदेश स्थानि के तुल्य हो यदि स्थानि अल के आश्रय विधि न होय सो।

बहुवचने झल्येत् । ७ । ३ । १०३ ॥

झलादि बहुवचन सुप परें रहतें अदन्त अंग को एकार होय।

वाऽवसाने । ८ । ४ । ५६ ॥

अवसान में झलों को चर होय विकल्प से।

ओसि च । ७ । ३ । १०४ ॥

अदन्त अंग को एकार होय ओस परें होय तो।

ह्रस्वनद्यापो नुट् । ७ । १ । ५४ ॥

ह्रस्वान्त, नद्यन्त और आबन्त अंग से परे आम् को नुट् का आगम होय।

नामि । ६ । ४ । ३ ॥

अजन्त अंग को दीर्घ होय नाम परें रहते।

आदेशप्रत्यययोः । ८ । ३ । ५९ ॥

इण कवर्ग से परे अपदान्त आदेश और प्रत्यय अवयव के सकार को (मूर्धन्य) षकार होय।

सर्वादीनि सर्वनामानि । १ । १ । २७ ॥

सर्वादि सर्व नाम संज्ञक होय।

जसः शी । ७ । १ । १७ ॥

अदन्त से परे सर्व नाम से विहित जस को शी होय।

सर्वनाम्नः स्मै । ७ । १ । १४ ॥

अदन्त से परें सर्वनाम से विहित ङे को स्मै आदेश होय।

ङसिङ्योः स्मात्स्मिनौ । ७ । १ । १५ ॥

अदन्त से परें सर्वनाम से विहित ङसि और ङि को स्मात् और स्मिन् आदेश होय।

आमि सर्वनाम्नः सुट् । ७ । १ । ५२ ॥

अवर्णान्त से परे सर्वनाम से विहित आम् को सुट् का आगम होय।

तस्येह पाठोऽकजर्थः ।

उभ शब्द का पाठ सर्वादि गण में अकच् प्रत्यय के लिये है, जिससे लक्षित में उभकौ आदि प्रयोग सिद्ध हैं।

उभयशब्दस्य द्विवचनं नास्ति ।

उभय शब्द में द्विवचन नहीं होता है।

उभयो मणिरुभयदेव मनुष्याः इतिभाष्यात्

इस भाष्य में उभयः, उभये इन प्रयोगों के देखने से।

स्वमज्ञातिधनाख्यायाम् । १ । १ । ३५ ॥

ज्ञाती और धन से अन्य वाची (आत्मीय, आत्मा वाची) स्व शब्द की गणसूत्र से प्राप्त जो सर्व नामसंज्ञा वह जस के परे विकल्प से होय । अर्थात् स्व शब्द के चार अर्थ हैं ज्ञाति, धन, आत्मीय, आत्मा" इनमें ज्ञातो, धन, वाची स्व शब्द की सर्वनाम संज्ञा नहीं होती है और आत्मीय (पुत्र) और आत्मा (स्वयम्) की सर्वनाम संज्ञा होती है । इससे ज्ञाति और धन वाची स्वशब्द के रामवत् रूप जानना और आत्मीय, आत्मा, में पूर्ववत् ।

अन्तरं बहिर्योगोपसंव्यानयोः । १ । १ । ३६ ॥

बाह्य और परिधानीय अर्थ में अन्तर शब्द की गणसूत्र से प्राप्त जो सर्वत्र सर्वनाम संज्ञा जस परे विकल्प से हो।

पूर्वादिभ्यो नवभ्यो वा । ७ । १ । १६ ॥

पूर्व, पर, अवर, दक्षिण, उत्तर, अपर, अधर, स्व, अन्तर इनसे परे ङसि, और ङि इनको क्रम से स्मात्, और स्मिन् आदेश होय विकल्प से ।

प्रथमचरमतयाल्पार्द्धकतिपयनेमाश्च । १ १ । ३३ ॥

प्रथम, चरम, तय (प्रत्यय) अल्प, अर्ध, कतिपय, नेम, ये शब्द भी सर्वनाम संज्ञक होंय जस परे विकल्प से ।

होय और दीर्घ, हि, आप, सदन्त से परे सु सम्बन्धि अपृक्त हल् का लोप होय।

नलोपः प्रातिपदिकान्तस्य । ८ । २ । ७ ॥

प्रातिपदिकसंज्ञक जो पद उस पद के अन्त नकार का लोप होय।

सख्युरसम्बुद्धौ । ७ । १ । ९२ ॥

सखि शब्द के अंग से परे संबुद्धि को छोड़कर सर्व नाम स्थान णिद्वत् हो।

अचो ञ्णिति । ७ । २ । ११५ ॥

अजन्त अंग को वृद्धि होय ञित्णित् प्रत्यय परे।

ख्यत्यात्परस्य । ६ । १ । ११२ ॥

किया है यण आदेश जिनको ऐसे ह्रस्व खिति शब्द और तीर्य शीती शब्दों से परे ङसि ङस के अकार को उकार होय।

औत् । ७ । ३ । ११८ ॥

इकार से परे ङि को औत् आदेश होय।

पतिः समास एव । १ । ४ । ८ ॥

पति शब्द समास में ही घि संज्ञक होय।

बहुगणवतुडति संख्या । १ । १ । २३ ॥

बहु, गण, (शब्द) वतु डति (प्रत्यय) संख्या संज्ञक होय।

डति च । १ । १ २५ ॥

डत्यन्त संख्या वाची शब्द षट् संज्ञक है।
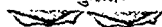
षड्भ्यो लुक् । ७ । १ । २२ ॥

षट संज्ञक शब्दों से परें जस् शस् का लुक् (लोप) होय।

प्रत्ययस्य लुक्श्लुलुपः । १ । १ । ६१ ॥

लुक्, श्लु, लुप् शब्दो करके किया हुआ जो प्रत्यय का अदर्शन वह क्रम से लुक्, श्लु, लुप, संज्ञक होय।

प्रत्ययलोपे प्रत्ययलक्षणम् । १ । १ । ६२ ॥

प्रत्यय का लोप होने पर प्रत्यय निमित्तक कार्य होय।

नलुमताऽङ्गस्य १ । १ । ६३ ॥

लुमता शब्द से प्रत्यय लोप होनेपर प्रत्यय निमित्तक अंग कार्य न होय।

युष्मदस्मत् षट् संज्ञकास्त्रिपु सरूपाः।

युष्मद्, अस्मद्, और षट्संज्ञक शब्दों के रूप तीनों लिङ्गों में एकसे बनते हैं।

त्रेस्त्रयः । ७ । १ । ५३ ॥

त्रि शब्द को त्रय आदेश होय आम् परें होय तो।

त्यदादीनामः।७।२।१०२॥

त्यदादियों को अकार होय विभक्ति परें।

* द्विपर्यन्तानामेवेष्टिः *

त्यदादि द्विपर्यन्त होते हैं।

दीर्घाज्जसि च।६।१।१०५॥

दीर्घ से जस, इच् परें पूर्वसवर्णदीर्घ न होय।

यू स्त्र्याख्यौ नदी।१।४।३॥

नित्य स्त्रीलिंग वाची ईदन्त, ऊदन्त नदी संज्ञक हों।

* प्रथमलिङ्गग्रहणञ्च *

प्रथम स्त्री लिंग वाची शब्दों को उपसर्ग (गौड) न हं पर भी नदी संज्ञा कहनी चाहिये।

अम्बार्थनद्योर्ह्रस्वः।७।३।१०७॥

अम्बावाची और नदीसंज्ञक शब्दों को ह्रस्व हं संबुद्धि परें होय त।

आण् नद्याः।७।३।११२॥

नद्यन्त शब्दों से परें ङित वचन को आट का आगम।

आटश्च।६।१।९०॥

आट से अच परें वृद्धिरूप एकादेश होय।

अजन्त पुँल्लिङ्गाः

ङेराम्नद्याम्नीभ्यः ।७।३।११६॥
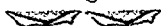
नद्यन्त, आबन्त और नी शब्द से परे ङि को आम हो।

अङ्यन्तत्वान्नसुलोपः।

ङीप की ईकार न होने से सु का लोप नहीं होता है।

अवीतन्त्रीतरीलक्ष्मीधीह्रीश्रीणामुणादितः

इत्यादि सप्त शब्दानां, सुलोपो न कदाचनः।

अवी, तंत्री, तरी लक्ष्मी, ह्री, धी, श्री. इन सात शब्दा के सु का लोप कभी नहीं होता है।

अचि श्नुधातुभ्रुवांय्वोरियङुवङौ ।६।४।७७॥

श्नु प्रत्यान्त इवर्णान्त, उवर्णान्त, धातु और भ्रू शब्द इनके अंग को इयङ उवङ आदेश होय अजादि प्रत्यय परें होय तो।

एरनेकाचोऽसंयोगपूर्वस्य ।६।४।८२॥

धातु का अवयव संयोग पूर्व नहीं है जिसके एसा जो इवर्ण तदन्त (इवर्णान्त) जो धातु ;तदन्त (धात्वन्त अनेकाच अंग को यण होय अजादि प्रत्यय परें रहते।

गतिश्च ।१।४।६०॥

प्रादि (प्र परा अप सम इत्यादि) क्रिया के योग में गतिसंज्ञक होय।

विभाषा तृतीयादिष्वचि । ७ । १ । ९७ ॥

अच प्रत्यय जिनके आदि में हो ऐसी तृतीयादि विभक्ति परें रहते क्रोष्टु शब्द तृच प्रत्ययान्त के तुल्य हो विकल्प से ।

ऋत उत् । ६ । १ । १११ ॥

ऋदन्त से परें उत एकादेश होय ङसि ङस के अत परें रहते ।

रात्सस्य । ८ । २ । २४ ॥

रेफ से परें संयोगान्त स का ही लोप होय अन्य का लोप न हो ।

● नुमचिरतृज्वद्भावेभ्यो नुट् पूर्वविप्रतिषेधेन ●

नुम अचपरें र भाव तृज्वद्भाव इनसे पूर्व विप्रतिषेध करके नुट ही का आगम होव ।

अतिचमूशब्देतुनदीकार्य विशेषः ।

अतिचमु शब्द में तो नदीसंज्ञा का कार्य विशेष है ।

ओः सुपि । ६ । ४ । ८३ ॥

धातु का अवयव संयोग पूर्व में नहीं है जिसके, एसा जो उवर्ण (उवर्णान्त) तदन्त जो धातु (धात्वन्त) तदन्त अनेकाच अंग को यण होय अच सुप परें होय तो ।

वर्षाभ्वश्च । ६ । ४ । ८४ ॥
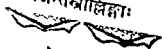
औकार से अम् शस् सम्बन्धि अचपरें रहते आकार एकादेश होय ।

रायो हलि । ७ । २ । ८५ ॥

रै शब्द के ऐकार को आकार आदेश होय हल विभक्ति परें रहते ।

॥ इत्यजन्तपुंल्लिङ्गाः ॥

❀ अथ अजन्तस्त्रीलिङ्ग प्रकरणम् ❀

औङ आपः । ७ । १ । १८ ॥

आवन्त अंग से परें औङ को, शी होय ।

औङित्यौकार विभक्तेः संज्ञा ।

औकार विभक्ति की ही औङ संज्ञा है ।

सम्बुद्धौ च । ७ । ३ । १०६ ॥

आप को एकार होय सम्बुद्धि परें रहते ।

आङि चापः । ७ । ३ । १०५ ॥

आङ ओस परें होय तो आप को एकार होय ।

तिसृ चतसृ शब्दों के ऋकार को रेफ आदेश होय अच विभक्ति परें।

गुणदीर्घोत्वानामपवादः ।

गुण, दीर्घ, उत्व का बाधक यह सूत्र है।

न तिसृचतसृ ।६।४।४॥

तिसृ चतसृ इन शब्दों को नाम परें दीर्घ न होय।

स्त्रियाः ।६।४।७९॥

स्त्री शब्द को इयङ् आदेश होय अजादि प्रत्यय परें।

वाम्शसोः ।६।४।८०॥

अम् शस् विभक्ति परें होयतो स्त्री शब्द को इयङ् आदेश विकल्प से।

नेयङुवङ्स्थानावस्त्री ।१।४।४॥

इयङ् उवङ् की स्थिति है जिनमें ऐसे जो ईदन्त, ऊदन्त नदी संज्ञक न होय, स्त्री शब्द को छोड़ कर।

वामि ।१।४।५॥

इयङ् उवङ् की स्थिति है जिनमें ऐसे जो स्त्रीलिंग वाची ईदन्त ऊदन्त नदी संज्ञक हो आम परे विकल्प से स्त्री शब्द को छोड़ कर

नपुंसकाच्च ।७।१।१९॥

क्लीव वाची शब्दों से परें औङ कूं शी आदेश होय।

यस्येति च ।६।४।१४८॥

ईकार और तद्धित परें भ संज्ञक इवर्ण और अवर्ण का लोप होय।

० औङः श्यां प्रतिषेधो वाच्यः । ०

औङ संबन्धी शी परें रहते "यस्येति च" सूत्र से प्राप्त लोप का प्रतिषेध कहना चाहिये।

जश्शसोः शिः ।७।१।२०॥

क्लीव वाची शब्दों से परें जस् शस् को शि होय।

शि सर्वनामस्थानम् ।१।१।४२॥

शि सर्वनाम स्थान संज्ञक होय।

नपुंसकस्य झलचः ।७।१।७२॥

झलन्त, अजन्त, क्लीव वाची शब्दों को नुम् का आगम होय सर्वनामस्थान परें होय तो।

मिदचोऽन्त्यात्परः ।१।१।४७॥

अचों के मध्य में जो अन्त्य अच उस अच से परें समुदाय का अन्त्यावयव मित कार्य होता है।

अजन्तनपुंसकलिङ्गाः

अस्थिदधिसक्थ्यक्ष्णामनङुदात्तः । ७ । १ । ७५ ॥

अस्थि, दधि, सक्थि, अक्षि इनको उदात्त अनङ् आदेश होय टादि विभक्ति परे रहते ।

अल्लोपोऽनः । ६ । ४ । १३४ ॥

अंग का अवयव सर्वनाम भिन्न यजादि स्वादि विभक्ति परे जो अन उसके अकार का लोप होय ।

विभाषा ङिश्योः । ६ । ४ । १३६ ॥

अंग का अवयव सर्वनाम स्थान भिन्न यजादि स्वादि विभक्ति परे जो अन उसके अकार का लोप होय विकल्प से ङि और शी परे रहते ।

तृतीयादिषु भाषितपुंस्कं पुंवद्गालवस्य । ७ । १ । ७४ ॥

प्रवृत्ति निमित्त की एकता होने पर कहा है पुंलिंग में जिसको ऐसे इगन्त क्लीव वाची शब्दों का पुंवद्भाव (पुंलिंग-कासा रूप) होय विकल्प से टादि अच परे होय ।

एच इग्घ्रस्वादेशे । १ । १ । ४८ ॥

आदिश्यमान ह्रस्वो के मध्य में एचों को ह्रस्व होय ।

एकदेशविकृतमनन्यवत् ॥

जिसका एकदेश विकृत होगया हो वह अन्य के समान नहीं होता है ।

इत्यजन्तनपुंसकलिङ्गाः ॥

● अथ हलन्तपुंल्लिङ्ग प्रकरणम् ●

हो ढः । ८ । २ । ३१ ॥

हकार को ढकार होय झल परे वा पदान्त में।

दादेर्धातोर्घः । ८ । २ । ३२ ॥

उपदेश अवस्था में दकारादि धातु के हकार को घकार होय झल परे वा पदान्त में।

एकाचो बशो भष् झषन्तस्य स्ध्वोः । ८ । २ । ३७ ॥

धातु के अवयव एकाच झषन्त तदवयव बश को भष् भाव होय स, ध्व, परें वा पदान्त में।

वा द्रुहमुहष्णुहष्णिहाम् । ८ । २ । ३३ ॥

द्रुह् मुह् ष्णुह ष्णिह इन शब्दों के हकार को घकार होय विकल्प से झल परें वा पदान्त में।

धात्वादेः षः सः । ६ । १ । ६४ ॥

धातु के आदि षकार को सकार होय।

इग्यणः सम्प्रसारणम् । १ । १ । ४५ ॥

यण के स्थान में प्रयुज्यमान जो इक वह सम्प्रसारण संज्ञक होय।

वाह ऊठ् । ६ । ४ । १३२ ॥

... नामक वाह् के । सम्प्रसारण ऊठ् होय ।

सम्प्रसारणाच्च । ६ । १ । १०८ ॥

सम्प्रसारण से अच परें रहते पूर्वरूप एकादेश होय ।

चतुरनडुहोरामुदात्तः।७।१। ९८॥

चतुर् और अनुडुह् शब्द को उदात्त आम होय सर्वनाम स्थान परें।

सावनडुहः।७।१।८२॥

अनडुह् शब्द को नुम् का आगम होय सु परें।

अम्सम्बुद्धौ।७।१।९९॥

अनडुह् शब्द को अम् का आगम होय सम्बुद्धि परें।

वसुस्रंसुध्वंस्वनडुहांदः।८।२।७२॥

मान्त वस्वन्त और स्रंसादियों को दकार होय पदान्त में।

सहेःसाडःसः।८।३।५६॥

साडरूप सह् के सकार को (मूर्धनि) षकार होय।

दिव औत्।७।१।८४॥

दिव इस प्राति पदिक शब्द के वकार को औत आदेश सु परें होयतौ।

दिव उत् ।६।१।१३१॥

दिव् शब्द के अन्त वकार को उकार होय पदान्त में

पद् चतुर्भ्यश्च ।७।१।९५॥

पद् संज्ञक और चतुर् शब्दों से परे आम को नुट् आगम होय।

रषाभ्यां नो णः समानपदे ।८।४।१॥

रेफ और षकार से परे न को ण होय समान पद में

अचो रहाभ्यां द्वे । ८ । ४ । ४६ ॥

अच से परे जो रेफ, हकार उससे परे जो यर उ द्वित्व होय विकल्प से।

रोः सुपि ।८।३।१६॥

सप्तमी के बहुवचन में रु के ही रेफ को विस सुप परे।

शरोऽचि।८।४।४९॥

शर को द्वित्व न होय अच परे होयतो।

मो नो धातोः।८।२।६४॥

धातु के मकार को नकार होय पदान्त में।

किमः कः।७।२।१०३॥

किम शब्द को क आदेश होय विभक्ति परे।

हलन्त पुँलिङ्गाः

इदमो मः ।७।२।१०८॥

इदम् शब्द के मकार को म ही होय सु परे होय तो।

इदोऽयि पुंसि।७।२।१११॥

इदम् शब्द के इद् भाग को अय् आदेश होय सु परे लिङ्ग में।

अतो गुणे।६।१।९७॥

अपदान्त अकार से गुण परे रहते पररूप एकादेश होय।

दश्च।७।२।१०९॥

इदम् शब्द के दकार को मकार होय विभक्ति परे रहते।

त्यदादेः संबोधनं नास्तीत्युत्सर्गः।

त्यदादियों में सम्बोधन नहीं होता है।

अनाप्यकः।७।२।११२॥

ककार रहित इदम् शब्द के इद् भाग को अन् आदेश होय। आपविभक्ति (टासे सुप) परे रहते।

हलि लोपः।७।२।११३॥

ककार रहित इदम् शब्द के इद् भाग का लोप होय हलादि विभक्ति परे होय तो।

नानर्थकेऽलोऽन्त्यविधिरनभ्यासविकारे।

अभ्यास विकार को छोड़ कर अनर्थक विधि में "अलो-ऽन्त्यस्य" सूत्र नहीं लगता है।

कहना चाहिये। सूत्र में किया हुआ आत्व का निर्देश है वह अम् शस् के विषय आत्व को ज्ञापक करता है।

ऋत्विग्दधृक्स्रग्दिगुष्णिगञ्चुयुजिक्रुञ्चां च। ३।२।५९॥

ऋत्विक्, दधृक्, स्रक्, दिक्, उष्णिक्, अञ्च, युजि क्रुञ्च इनसे क्विन प्रत्यय होय, सुप उपपद होने पर अञ्च धातु में केवल युजि क्रुञ्च धातु में क्विन प्रत्यय होय और क्रुञ्च के नकार का अभाव निपातन से करते हैं।

कृदतिङ्। ३।१।९३॥

यहाँ धातु के अधिकार में तिङ्भिन्न जो प्रत्यय वह कृत् संज्ञक होय।

वेरपृक्तस्य।६।१।६७॥

अपृक्त वकार का लोप होय।

क्विन्प्रत्ययस्य कुः।८।२।६२॥

क्विन प्रत्यय जिस शब्द से करें उस शब्द के अन्त कवर्ग आदेश होय।

(अस्यासिद्धत्वाच्चोःकुरिति कुत्वम्)

"क्विन प्रत्ययस्य कुः" इस सूत्र को असिद्ध होने से 'चोः कुः' इस सूत्र से कुत्व होगया।

युजेरसमासे।७।१।७१॥

युज शब्द को नुम का आगम होय सर्वनाम स्थान परे असमास में।

चोः कुः । ८ । २ । ३० ॥

चवर्ग को कवर्ग होय झल परें या पदान्त में ।

व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयजराजभ्राजच्छशां षः । ८ । २ । ३६ ॥

व्रश्च्, भ्रस्ज्, सृज्, मृज्, यज्, राज्, भ्राज् और छकारान्त, शकारान्त शब्दों को षकार होय झल परें या पदान्त में ।

• परौ व्रजेः षः पदान्ते •

परि उपपद व्रजधातु से क्विप् प्रत्यय होय दीर्घ हो और पदान्त में षत्व भी होय ।

विश्वस्य वसुराटोः । ६ । ३ । १२८ ॥

विश्व शब्द को दीर्घ अन्तादेश होय वसु और राट् शब्द परें रहते पदान्त में ।

स्कोः संयोगाद्योरन्ते च । ८ । २ । २९ ॥

झल परें या पदान्त में जो संयोग उसके आदि सकार, ककार का लोप होय ।

ग्रहिज्यावयिव्यधिवष्टिविचतिवृश्चति
पृच्छतिभृज्जतीनां ङिति च । ६ । १ । १६ ॥

ग्रहि, ज्या, वयि, व्याधि, वष्टि, विच, व्रश्च, प्रच्छ, भृज्ज धातुओं को सम्प्रसारण हो कित्, ङित् परें ।

तदोः सः सावनन्त्ययोः । ७ । २ । १०६ ॥

त्यदादियों के अनन्त्य (आदि, मध्य के) तकार, दकार को सकार होय सु परें।

ङेः प्रथमयोरम् । ७ । १ । २८ ॥

युष्मद्, अस्मद्, शब्द से परें ङे को तथा प्रथमा, द्वितीया विभक्ति को अम आदेश हो।

त्वाहौ सौ । ७ । २ । ९४ ॥

युष्मद्, अस्मद् शब्द के मपर्यन्त भाग को त्व, अह आदेश होय सु परें।

शेषे लोपः । ७ । २ । ९० ॥

युष्मद्, अस्मद्, शब्द की टि का लोप होय।

आत्व, यत्व निमित्त से इतर विभक्ति परें युष्मद्, अस्मद् शब्दों के अन्त्य का लोप होय।

युवावौ द्विवचने । ७ । २ । ९२ ॥

द्वित्व वाचक (द्विवचन को कहने वाले) युष्मद्, अस्मद् शब्द के मपर्यन्त भाग को युव आव आदेश हो विभक्ति परें।

प्रथमायाश्च द्विवचने भाषायाम् । ७ । २ । ८८ ॥

प्रथमा के द्विवचन (औ) में युष्मद्, अस्मद्, शब्द को आत्व होय।
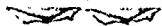
यूयवयौ जसि । ७ । २ । ९३ ॥

युष्मद्, अस्मद् शब्द के मपर्यन्त भाग को यूय वय आदेश होय जस परें ।

त्वमावेकवचने । ७ । २ । ९७ ॥

एकत्व को कहने वाले युष्मद्, अस्मद् शब्दों के मपर्यन्त भाग को त्व, म आदेश होय विभक्ति परें ।

द्वितीयायाञ्च । ७ । २ । ८७ ॥

युष्मद्, अस्मद् शब्दों को आत्व होय द्वितीया विभक्ति में

शसो न । ७ । १ । २९ ॥

युष्मद्, अस्मद् शब्द से परें शस् को न होय ।

योऽचि । ७ । २ । ८९ ॥

युष्मद्, अस्मद् शब्द के दकार को यकार आदेश होय आदेश रहित अजादि विभक्ति परें होय तौ ।

युष्मदस्मदोरनादेशे । ७ । २ । ८६ ॥

युष्मद्, अस्मद् शब्द को आत्व होय आदेश रहित हलादि विभक्ति परें रहते ।

तुभ्यमह्यौ ङयि । ७ । २ । ९५ ॥

युष्मद्, अस्मद् शब्द के मपर्यन्त भाग को तुभ्य मह्य आदेश होय ङे विभक्ति परें ।

भ्यसोऽभ्यम् । ७ । १ । ३० ॥

युष्मद्, अस्मद् शब्द से परें भ्यस् को भ्यम् या अभ्यम आदेश होय।

एकवचनस्य च । ७ । १ । ३२ ॥

युष्मद्, अस्मद् शब्द से परें एक वचन ङसि को अत आदेश होय।

पंचम्या अत् । ७ । १ । ३१ ॥

युष्मद्, अस्मद् शब्द से परें पंचमी विभक्ति की भ्यस् को अत आदेश होय।

तवममौ ङसि । ७ । २ । ९६ ॥

युष्मद्, अस्मद् शब्द के मपर्यन्त भाग को तव मम आदेश होय ङस् विभक्ति परें।

युष्मदस्मद्भ्यां ङसोऽश् । ७ । १ । २७ ॥

युष्मद्, अस्मद् शब्द से परें ङस् को अश् आदेश हो।

साम आकम् । ७ । १ । ३३ ॥

युष्मद्, अस्मद् शब्द से परें साम को आकम् आदेश हो

युष्मदस्मदोः षष्ठी चतुर्थी
द्वितीयास्थयोर्वान्नावौ ८ । १ । २० ॥

पद से परें पाद के आदि में स्थित न हो ऐसे षष्ठी, चतुर्थी, द्वितीया विशिष्ट युष्मद्, अस्मद् शब्द को वाम् नौ आदेश होय।

बहुवचनस्य वस्नसौ । ८ । १ । २१ ॥

पद से परे पाद के आदि में स्थित न हो ऐसे षष्ठी, चतुर्थी द्वितीया के बहुवचन विशिष्ट युष्मद्, अस्मद् शब्दों को वस्, नस् आदेश होय ।

तेमयावेकवचनस्य । ८ । १ । २२ ॥

पद से परे पाद के आदि में स्थित न हो ऐसे षष्ठी चतुर्थी के एकवचन युक्त युष्मद्, अस्मद् शब्दों को ते, मे आदेश होय ।

त्वामौ द्वितीयायाः । ८ । १ । २३ ॥

पद से परे पाद के आदि में स्थित न हो ऐसे द्वितीया के एक वचन युक्त युष्मद् अस्मद् शब्दों को त्वा मा आदेश हो ।

श्रीशस्त्वावतुऽमापि ।

श्रीशः त्वा (त्वाम्) मा (माम्) अपि अवतु (रक्षतु) श्रीभगवान् तेरी और मेरी रक्षा करें। यह द्वितीया का एक वचन है।

इह दद्यात्ते मेऽपि शर्म सः ।

स (ईशः) इह (संसारे) ते (तुभ्य) मे (मह्यम्) अपि शर्म (कल्याणम्) दद्यात् (ददातु) वह ईश्वर इस संसार में तेरे लिये और मेरे लिये भी कल्याण दें। यह चतुर्थी का एक वचन है।

स्वामी तेमेऽपि स हरिः।

स हरिः ते (तव) मे (मम) अपि स्वामी, वो हरि तेरे और मेरे भी स्वामी हैं यह षष्ठी का एक वचन है!

पातु वामपि नौ विभुः।

विभुः (ईश्वर) वाम (युवाम्) नौ(आवाम्) अपि पातु, वो ईश्वर तुम दोनों और हम दोनों को भी पालें, यह द्वितीया का द्विवचन है।

सुखं वां नौ ददात्वीशः।

ईशः वाम (युवाभ्याम्) नौ (आवाभ्याम्) सुखं ददातु। वो ईश्वर तुम दोनों के लिये और हम दोनों के लिये सुख दें। यह चतुर्थी का द्विवचन है।

पतिर्वामपि नौ हरिः।

हरिः (विष्णुः) वाम् (युवयोः) नौ (आवयोः) अपि पतिः। यह विष्णु भगवान तुम दोनों और हम दोनों के भी पति हैं। यह षष्ठी का द्विवचन है।

सोऽव्याद्वोनः।

स (विभुः) वः (युष्मान) नः (अस्मान) अव्यात (रक्षेत), वह श्रीपति तुम सबों और हम सबों की रक्षा करें, यह द्वितीया का बहु वचन है।

निर्वं वो नो दद्यात् ।
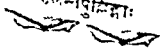
सः (कृष्णः) वः (युष्मभ्यम्) नः (अस्मभ्यम्) निर्वम्
(सुखम्) दद्यात (ददातु) । यह श्रीकृष्ण भगवान तुम सबों
के लिये और हम सबों के लिये सुख दे, यह चतुर्थी का बहु
वचन है।

से व्योऽत्र वः स नः ।

अत्र (संसारे) स (ईशः) वः (युष्माकम्) नः
(अस्माकम्) सेव्यः . इस संसार में यह ईश्वर तुम सबों
करके और हम सबों करके सेवा करने योग्य है। यहां
" कृत्यानां कर्तरि वा " इस सूत्र से युष्माभिः अस्माभिः में
षष्ठी होगई।

• एक वाक्ये युष्मदस्मदादेशाः वक्तव्याः •

एक वाक्य में युष्मद् अस्मद् शब्दों को ते, मे, वां नौ
स् नस् आदेश कहना।

एक तिङ् वाक्यम् ।

एक तिङन्त है जिसमें ऐसे वचन को वाक्य कहते हैं.
ओदनं पच तव भविष्यति, यहां एक तिङ पच है दूसरा
ष्यति अतः दो होने से आदेश नहीं हुये।

* एते वाञ्नावादयोऽनन्वादेशे वा वक्तव्याः *

ये वां नौ आदि आदेश अनन्वादेश में (अन्वादेश प्रयोगों में) विकल्प से कहना चाहिये । और अन्वादेश में नि आदेश हों।

पादः पत् । ६ । ४ । १३० ॥

पाद शब्द है अन्त में जिसके ऐसे भसंज्ञक अंग के अ पाद शब्द को पद् आदेश होय।

अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति। ६ । ४ । २४ ॥

हलन्त अनिदित (इकार जिसमें इत् न गया हो धातु) अंग की उपधा के नकार का लोप हो किन्, ङित पर

अचः । ६ । ४ । १३८ ॥

लोप होगया है नकार जिसका ऐसी भसंज्ञक अञ्चति के अकार का लोप होय।

चौ । ६ । ३ । १३८ ॥

लोप होगया है नकार अकार जिसमें ऐसी अञ्चति परे रहते पूर्व अण को दीर्घ होय।

उद ईत् । ६ । ४ । १३९ ॥

उद् शब्द से परे लुप्त है नकार जिसका ऐसी भ अञ्चति धातु के अकार को ईकार होय।

समः समि । ६ । ३ । ९३ ॥
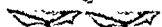
हलन्त पुंलिङ्गाः

यप्रत्ययान्त अञ्चति धातु परें नम् को नमि आदेश हो।

मदस्य मध्रिः । ६ । ३ । ९५ ॥

यप्रत्ययान्त अञ्चति धातु परें मद् को मध्रि आदेश हो।

तिरसस्तिर्य्यलोपे । ६ । ३ । ९४ ॥

लुप्त नहीं है अकार जिसका ऐसी यप्रत्ययान्त अञ्चति धातु परें तिरस् को तिरि आदेश होय।

नाञ्चेःपूजायाम् । ६ । ४ । ३० ॥

पूजार्थक अञ्चति धातु की उपधा के नकार का लोप न होय।

न लोपाभावादलोपो न ।

नकार का लोप न होने से अकार का भी लोप न हुआ।

सान्तमहतः संयोगस्य । ६ । ४ । १० ॥

सान्त संयोग और महत् शब्द के नकार की उपधा को दीर्घ होय सम्बुद्धि भिन्न सर्वनामस्थान परें।

अत्वसन्तस्य चाधातोः । ६ । ४ । १४ ॥

अत्वन्त की उपधा और धातु भिन्न असन्त की उपधा को दीर्घ होय सम्बुद्धि भिन्न सु परें।

डित्वसामर्थ्यादभस्यापिटेर्लोपः ।

डित्व (ड, जिसमें इत हो) सामर्थ्य से अभसंज्ञक टि का लोप होय।

रुत्वं प्रति षत्वस्यासिद्धत्वात् ससजुषो रुरिति ।

रुत्व के प्रति षत्व को असिद्ध होने से "ससजुषोरुः" से रु हो गया।

र्वोरुपधाया दीर्घ इकः । ८ । २ । ७६ ॥

रेफान्त और वान्त धातु की उपधा के इक को दीर्घ होय पदान्त में।

नुम्विसर्जनीयशर्व्यवायेऽपि । ८ । ४ । ५८ ॥

नुम्, विसर्ग, शर्, इन प्रत्येक का व्यवधान होने पर भी इण् कवर्ग से परे (दन्ती) न को (मूर्धनी) ण होय।

वसोः संप्रसारणम् । ६ । ४ । १३१ ॥

वस्वन्त भसंज्ञक को सम्प्रसारण होय।

पुंसोऽसुङ् । ७ । १ । ८९ ॥

सर्वनामस्थान की विवक्षा में पुंस शब्द को असुङ् आदेश होय।

* अस्य सम्बुद्धौ वानङ् नलोपश्च वा वाच्यः *

उशनस् शब्द को सम्बुद्धि में विकल्प से अनङ् आदेश तथा विकल्प से नकार का लोप कहना चाहिये।

अदस औ सुलोपश्च । ७ । २ । १०७ ॥

अदस् शब्द को औ और सु का लोप होय।

अदसोऽसेर्दादुदो मः । ८ । २ । ८० ॥

मान्त भिन्न अदस्‌शब्द के दकार से परें उत् ऊत् दकार को मकार होय।

आन्तरतम्याद्‌ध्रस्वस्यउः दीर्घस्य ऊः।

प्रमाणकृत सादृश्य से ह्रस्व को ह्रस्व उ, दीर्घ को दीर्घ ऊ होय

एत ईद्बहुवचने । ८ । २ । ८१ ॥

अदस् शब्द के दकार से परें एकार को ईकार होय और दकार को मकार होय बहुवचन में।

पूर्वत्रा सिद्धमिति विभक्ति कार्यं प्राक् पश्चादुत्वमत्वे।

"पूर्वत्रा सिद्धम्" इस सूत्र की सहायता से पहले विभक्ति कार्य्य (असिपूर्व) पीछे उत्वमत्व हो।

न मु ने । ८ । २ । ३ ॥

ना भाव करना हो या कर लिया हो तो मुभाव असिद्ध नहीं होता है अर्थात् सिद्ध रहता है।

॥ इति हलन्तपुंल्लिङ्गाः ॥

अथ हलन्तस्त्रीलिङ्गप्रकरणम् ।

नहो धः । ८ । २ । ३४ ॥

नह् धातु के हकार को धकार होय झल परें या पदान्त में

नहिवृतिवृषिव्यधिरुचिसहितनिषु क्वौ । ६ । ३ । ११६ ॥

नहि, वृति, वृषि, व्यधि, रुचि, सहि, तनि, ये क्विबन्त परपद होने पर पूर्वपद को दीर्घ होय।

यः सौ । ७ । २ । ११० ॥

इदम् शब्द के दकार को यकार होय सु परे।

अपो भि । ७ । ४ । ४८ ॥

अप् शब्द के पकार को तकार होय भादि प्रत्यय परे।

त्यदादिष्विति दृशेः क्विन्विधानादन्यत्रापि कुत्वम् ।

"त्यदादिषु दृशोऽनालोचने कञ्च" इस सूत्र करके दृश् धातु से क्विन् विधान सामर्थ्य से अन्यत्र दृश् यहाँ भी कुत्व हो गया।

॥ इति हलन्तस्त्रीलिङ्गाः ॥

अथ हलन्तनपुंसकलिङ्गप्रकरणम्

* अन्वादेशे नपुंसके वा एनद्वक्तव्यः *

अन्वादेश नपुंसकलिङ्ग में विकल्प से इदम् शब्द को एनत् आदेश कहना चाहिये।

अहन् । ८ । २ । ६८ ॥

अहन् शब्द के नकार को रु होय पदान्त में।

सम्बुद्धौ नपुंसकानां न लोपो वा वाच्यः।

सम्बुद्धि में नपुंसकलिङ्गवाची शब्दों के नकार का लोप विकल्प से कहना चाहिये।

वा नपुंसकस्य । ७ । १ । ७९ ॥

अभ्यस्त संज्ञक शब्दों से परे जो शतृ प्रत्यय उसके अन्त क्लीव को विकल्प से नुम् का आगम होय सर्वनाम स्थान परें।

आच्छीनद्योर्नुम् । ७ । १ । ८० ॥

अवर्णान्त अंग से परे जो शतृ प्रत्यय उसके अवयव तदन्त को नुम होय विकल्प से शी ; नदी ; संज्ञक परें।

शप्श्यनोर्नित्यम् । ७ । १ । ८१ ॥

शप् श्यन प्रत्यय के अकार से परें जो शतृ प्रत्यय उसके अवयव तदन्त को नित्य ही नुम का आगम होय शी, नदी संज्ञक परें।

॥ इति हलन्तनपुंसकलिङ्गाः ॥

अथाव्ययप्रकरणम्

स्वरादिनिपातमव्ययम् ।१।१।३७॥

स्वर् आदि शब्द और निपात संज्ञक शब्दों की अव्यय संज्ञा होती है ।

स्वर्	स्वर्गलोक
अन्तर्	मध्य, चिन्ह
प्रातर्	प्रातःकाल
पुनर्	फिर, बारबार
सनुतर्	छिपना
उच्चैस्	ऊंचा, बड़ा
नीचैस्	नीचा, छोटा
शनैस्	धीरे २, विलम्ब
ऋधक्	सत्य, वियोग
सपमि	शीघ्र, अलाघव
यथार्थ	शुद्ध
ऋते	विना, रहित
युगपत	एकसाथ में
आरात	समीप; दूर
पृथक्	अलग, विना

ह्यस्	बीता हुआ दिन
श्वस्	आगामी दिन
दिवा	दिन
रात्रौ	रात्रि में
सायम्	सायंकाल में
चिरम्	बहुत देर
मनाक्	थोड़ा
ईषत्	थोड़ासा
जोषम्	सुख, मौन
तूष्णीम्	चुपचाप, मौ
बहिस्	बाहर
अवस्	बाहर का
अधस्	नीचे
समया	समीप
निकषा	धीरे धीरे

स्वयम्	आप ही
वृथा	निरर्थक
नक्तम्	रात्रि
न	नहीं
नञ्	निषेध, अभाव
हेतौ	कारण, निमित्त
इद्धा	प्रकाश, सरल रीति
अद्धा	निश्चय, स्पष्ट
साक्षात्	तत्व, अतिशय
सामि	आधा, जुगुप्सित निन्दित
वत्	तुल्य, तरह
सदा	नित्य
सनत्	"
सनात्	"
उपधा	भेद
तिरस्	तिरस्कार
अन्तरा	मध्य बिना
अन्तरेण	छोड़कर, बिना
ज्योक्	प्रश्न, चिरकाल

	अथ शीघ्र, फिर
कम्	जल, मस्तक, निन्दा
शम्	सुख, कल्याण
सहसा	शीघ्र, एकाएक
बिना	छोड़कर
नाना	बिना, अनेक
स्वस्ति	मङ्गल, स्वीकारजनक
स्वधा	पितृदान
अलम्	भूषण, पूर्ण, वश शक्ति निषेध, निवारण
वषट् / श्रौषट् / वौषट्	यज्ञ में देवताओं को दान प्रदान करने में
अन्यत्	और
अस्ति	होना, है, था
उपांशु	समीप, अप्रकट
क्षमा	सहना
विहायसा	आकाश
दोषा	रात्रि
मृषा	असत्य
मिथ्या	असत्य

अव्ययानि

मृषा	व्यर्थ
पुरा	पहले, निरन्तर, व्यतीत हुआ, अधिक समय
मिथो / मिथस्	अन्योन्य, आपस माथ
प्रायस्	बहुधा
मुहुस्	बार २ फिर
प्रवाहिका / प्रवाहुकम्	अपर समान, काल
आर्यहलम्	बलात्कार से
अभीक्ष्णम्	अत्यन्त, बारबार
सकाम / सार्द्धम्	साथ
नमस्	नमस्कार करना
हिरुक्	छोड़कर, विना
धिक्	निन्दा, धिक्कार दैना
अथ	प्रारम्भ
अम	अल्प, शीघ्र. छन्द
ओम्	हां. अङ्गीकार
प्रताम्	ग्लानी थकावट
प्रशान्	समता. सामर्थ्य
प्रतान्	"
मा / माङ्	निषेध शङ्का

आकृतिगणोऽयम्

ये चादि आकृति गण है। इसमें इनके रूप भी अव्यय जानो॥

च	समुच्चय, अन्वाचय इतरेतरयोग समाहार, और
वा	विकल्प, अथवा उपमा निश्चय
ह	प्रसिद्ध
अह	पूजा
एव	निश्चय
एवम्	ऐसेही
नूनम्	निश्चय

* उपसर्ग विभक्तिस्वरप्रतिरूपकाश्च *

जो शब्द उपसर्ग विभक्ति और स्वर के तुल्य हो (अर्थात् वस्तुतः उपसर्ग विभक्ति स्वर न हो) तो उनकी भी अव्यय संज्ञा कहनी चाहिये।

जैसे अवदत्तम् इस पद में अव उपसर्ग नहीं है किन्तु तुल्य है अतः अव्यय संज्ञक हो अहं युः, अस्ति क्षीरा, इस पद में अहं विभक्ति नहीं किन्तु विभक्ति सरीखा है। अतः अव्यय संज्ञक होता है। इ इन्द्र, इस पद में इ स्वर नहीं किन्तु स्वर के तुल्य है अतः अव्यय होता है अ—सम्बोधन—अधिक्षेप निषेध आ—वाक्यस्मरण, इ सम्बोधन निन्दा विस्मय, ई, उ, ऊ इत्यादि सम्बोधनवाचक हैं।

पशु,	अच्छा	अङ्ग सम्बोधन वाचक है	
शुकम्,	शीघ्रता	है	,,
यथा कथा च, अनादर		है	,,
पाट् सम्बोधन वाचक		भो	,,
प्याट्	,,	अये	,,

श हिंसा, सम्बोधन पाद पूर्ण प्रति कूल
विषु अनेक चारों ओर
एकपदे इससे अचानक
कुत्र कुत्सित
प्रातः भी

अव्ययादाप्सुपः । २ । ४ । ८२ ॥

अव्यय संज्ञक शब्दों में विहित जो आप्, सुप् उनका लुक होय।

सदृशं त्रिषु लिङ्गेषु सर्वासु च विभक्तिषु ।
वचनेषु च सर्वेषु यन्न व्येति तदव्ययम् ॥१॥
वष्टि भागुरिरल्लोपमवाप्योरुपसर्गयोः ।
आपं चैव हलन्तानां यथा वाचा निशा दिशा ॥२॥

जो शब्द तीनों लिङ्गों में, सातों विभक्तियों में, संपूर्ण वचनों में विकृत न हो उसको अव्यय कहते हैं ॥१॥

श्रीभागुरि आचार्य का मत है कि अव और अपि, इन उपसर्गों के अकार का लोप होय और हलन्त शब्दों से आप प्रत्यय हो जाय। जैसे अवगाह, वगाह, अपिधानम्, पिधानम्, वाचा, निशा दिशा।

॥ इत्यव्यय प्रकरणम् ॥

अथ तिङन्ते भ्वादयः

लट्, लिट्, लुट्, लृट्, लेट्, लोट्, लङ्, लिङ्, लुङ्, लृङ्, एषु पञ्चमो लकारश्छन्दोमात्रगोचरः।

इन दश लकारों में पांचवीं लेट् लकार के प्रयोग वेद
जानने चाहिये।

लः कर्मणि च भावे चाकर्मकेभ्यः । ३ । ४ । ६९ ॥

पूर्वोक्त लकार सकर्मधातुओं से कर्म और कर्ता में
और अकर्मक धातुओं से भाव और कर्ता में हों।

वर्तमाने लट् । ३ । २ । १२३ ॥

वर्तमान क्रिया वृत्ति धातु से लट् लकार होय।

प्रारब्धापरिसमाप्तक्रियाश्रयत्वम् वर्तमानत्वम्

क्रिया के आरम्भ से समाप्ति के पूर्वकाल तक जि
समय है उसको वर्तमान काल जानना। +

उच्चारसामर्थ्याल्लस्य नेत्वम्।

उच्चार सामर्थ्य से ल की इत्संज्ञा नहीं होती है।

तिप्तस्झिसिप्थस्थमिब्वस्मस् तातांझ
थासाथान्ध्वमिड्वहि महिङ् । ३ । ४ । ७८ ॥

तिप्, तस्, झि, सिप्, थस्, थ, मिप्, वस्, मस्, त,
ताम्, झ, थास्, आथाम्, ध्व, मिड्, वहि, महि ये अठारह विकार
ल के स्थान में आदेश होंय।

+ जैसे गंगा वहति, पर्वताः सन्ति।
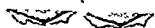
लः परस्मैपदम् । १ । ४ । ९९ ॥

ल के स्थान में आदेश जो तिबादि वे परस्मै पद संज्ञक होंय।

तङानावात्मनेपदम् । १ । ४ । १०० ॥

तङ् प्रत्याहार और शानच्, कानच्, प्रत्यय आत्मने पद संज्ञक होय।

अनुदात्तङित आत्मनेपदम् । १ । ३ । १२ ॥

जिन धातुओं में अनुदात्त और ङकार इत्संज्ञक हों तो उन धातुओं मे आत्मने पद संज्ञक प्रत्यय हो।

स्वरितञितः कर्त्रभिप्राये क्रियाफले । १ । ३ । ७२ ॥

जिन धातुओं का स्वरित और ञकार इत संज्ञक हो तो उन धातुओं में आत्मने पद संज्ञक प्रत्यय हो कर्ता को क्रिया का फल मिलना हो तो।

शेषात्कर्तरि परस्मैपदम् । १ । ३ । ७८ ॥

आत्मने पद निमित्त हीन धातुओं मे कर्ता में परस्मैपद संज्ञक प्रत्यय होय।

तिङस्त्रीणि त्रीणि प्रथममध्यमोत्तमाः । १ । ४ । १०१ ॥

तिङ् के जो उभय पद (परस्मैपद आत्मने पद) उनके जो तीन तीन त्रिक [illegible]
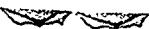
तिङ् शित्सार्वधातुकम्। ३।४।११३ ॥

धातु के अधिकार में कही गई जो तिङ् शित्, प्रत्यय वे सार्वधातुक संज्ञक हों।

कर्तरि शप्। ३।१।६८ ॥

कर्ता अर्थ में सार्वधातुक परें धातु से शप् प्रत्यय हो।

सार्वधातुकार्धधातुकयोः। ७।३।८४ ॥

सार्वधातुक और आर्ध धातुक परें रहते इगन्त अंग को गुण होय।

झोऽन्तः। ७।१।३ ॥

प्रत्यय अवयव झ् को अन्त आदेश होय।

अतो दीर्घो यञि। ७।३।१०१ ॥

अदन्त अंग को दीर्घ होय यञादि सार्वधातुक परें रहते।

परोक्षे लिट्। ३।२।११५ ॥

भूत अनद्यतन परोक्षार्थ वृत्ति धातु से लिट् लकार हो।

परोक्षत्वम्, वक्तुरिन्द्रियाविषयत्वम्।

परोक्ष काल उसको कहते हैं जो वक्ता ने न देखा हो। ×

परस्मैपदानां णलतुसुस्थलथुसणल्वमाः। ३।४।८२ ॥

× जैसे कंस को कृष्ण ने मारा।

लिट् के स्थानीय नौ तिबादियों (तिप् तस् झि, सिप् थस् थ, मिप् वस् मस्) को नौ णलादि (णल् अतुस् उस्, थल् अथुस् अ, णल् व म,) आदेश क्रम से हों।

भुवो वुग्लुङ्लिटोः। ६।४।८८ ॥

भू धातु को वुक् का आगम होय लुङ् लिट् सम्बन्धी अच् परें।

लिटिधातोरनभ्यासस्य। ६।१।८ ॥

लिट् परें अनभ्यास धातु अवयव प्रथम एकाच को द्वित्व होय और आदि भूत अच् परें द्वितीय एकाच को द्वित्व होय।

पूर्वोऽभ्यास ।६।१।४ ॥

यहां जो दो विधान किये गये हैं उनमें पूर्व अभ्यास संज्ञक होय।

हलादिः शेषः ।७।४।६० ॥

अभ्यास का आदि हल् शेष रहे अन्य हल् का लोप हो।

इतर निवृत्तिपूर्वकं स्थानस्थानंशेष इत्यर्थः ॥

शेष पद का यह अर्थ है कि इतर निवृत्ति पूर्वक अवस्थिति रहे अर्थात जहां आदि हल हो वहाँ शेष रहे जहां आदि हल न हो (अत धातु आदि) वहां इतर वर्ण का लोप होय जैसे अत् अ इसमें आदि हल नहीं है अतः तकार का लोप होगया।

हृस्वः । ७।४।५९ ॥

अभ्यास के अच् को ह्रस्व होय ।

भवतेरः । ७।४।७३ ॥

भू धातु के अभ्यास उकार को अकार होय लिट् परे ।

अभ्यासे चर्च । ८ । ४ ।५४ ॥

अभ्यास में झलों को जश् और खयों को चर् होय ।

लिट् च । ३ । ४ । ११५ ॥

लिट् स्थानीय तिङ् आर्धधातुक संज्ञक होय ।

आर्धधातुकस्येड्वलादेः । ७ । २ । ३५ ॥

वलादि आर्धधातुक को इट् का आगम होय ।

अनद्यतने लुट् । ३ । ३ । १५॥

भविष्यत् अनद्यतन अर्थ में धातु से लुट् लकार होय ।

अतीत रात्रेः पश्चार्धेन आगामिन्याः पूर्वार्धेन

सहितो दिवसोऽद्यतनः तद्भिन्नोऽनद्यतनः ।

[illegible] आगामी रात्रि के पूर्व-[illegible] दिवस [illegible] अद्यतन [illegible] को अनद्यतन [illegible] हैं

स्यतास[illegible] लृलुटो[illegible] । [illegible] ॥

[illegible]

आद्युत्तमस्य पिच्च । ३ । ४ । ९२ ॥

लोट् लकार के उत्तम पुरुष को आट् का आ और वह पित् होय ।

हिन्यो रुत्वं न, इकोरोच्चारण सामर्थ्यात् ।

हि और नि को उत्व नहीं होना है इकार के सामर्थ्य से ।

ते प्राग्धातोः । १ । ४ । ८० ॥

जिनकी गति संज्ञा है और उपसर्ग संज्ञा है उनको धातु से पहले प्रयोग करना चाहिये ।

आनि लोट् । १ । ४ । ८० ॥

उपसर्ग में स्थित निमित्त से परे लोट् स्थानीय नकार को णकार होय ।

* दुरः षत्वणत्वयोरुपसर्गत्वप्रतिषेधो वक्तव्यः । *

षत्व, णत्व के कर्तव्य में दुर् को उपसर्गत्व का प्रतिषेध करना चाहिये ।

अन्तश्शब्दस्याङ् किविधिणत्वेषूपसर्गत्वं वाच्यम् ।

अन्त शब्द को अङ् विधि और कि विधी और णत्व में उपसर्ग करना चाहिये ।

निसं निन्द [illegible] ॥

ङित् लकार के उत्तम पुरुष सकार को लोप होय।

अनद्यतने लङ् । ३ । २ । १११ ॥

अनद्यतन भूतार्थ वृत्ति धातु से लङ् लकार होय।

लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वडुदात्तः । ६ । ४ ७१ ॥

लुङ्, लङ्, लृङ् परे रहते अंग कूं उदात्त अट् का आगम होय।

इतश्च । ३ । ४ । १०० ॥

ङित् लकार के परस्मैपद इकारान्त के अन्त का लोप हो।

विधिनिमन्त्रणामन्त्रणाधीष्टसंप्रश्नप्रार्थनेषु लिङ् ।३।३।१६१ ॥

विधि, निमंत्रण आमंत्रण, अधीष्ट, संप्रश्न प्रार्थना इन अर्थों में धातु से लिङ् लकार होय।

यासुट् परस्मैपदेषूदात्तो ङिच्च । ३ । ४ । १०३ ॥

लिङ् लकार के परस्मैपद को यासुट् का आगम होय और वह ङित्संज्ञक होय।

लिङः सलोपोऽनन्त्यस्य । ७ । २ । ७९ ॥

सार्वधातुक लिङ् लकार के अनन्त्य सकार का लोप हो।

अतो येयः । ७ । २ । ८० ॥

अत् से परे सार्वधातुक के अवयव याम् को इय् —

लोपो व्योर्वलि । ६ । १ । ६६ ॥

यकार, वकार का लोप होय वल् प्रत्याहार परें रहते।

झेर्जुस् । ३ । ४ । १०८ ॥

लिङ् स्थानीय झि को जुस् होय।

लिङाशिषि । ३ । ४ । ११६ ॥

आशीर्वाद अर्थ में लिङ् स्थानीय तिङ् आर्ध धातुक संज्ञक होय।

किदाऽशिषि । ३ । ४ । १०४ ॥

आशीर्वाद अर्थ में लिङ् को आगम हुआ यासुट् कित् संज्ञक होताहै।

क्ङिति च । १ । १ । ५ ॥

गित् , किन्, ङित् के निमित्त इक् लक्षण में गुण और वृद्धि नहीं होता है।

लुङ् । ३ । २ । १० ॥

भूतार्थ वृत्ति धातु से लुङ् लकार होय।

माङि लुङ् ३ । ३ । १७५ ॥

संपूर्ण लकारों को बाधकर माङ् के योग में लुङ् लकार होय।

स्मोत्तरे लङ् च ३ । ३ । १७६ ॥
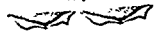
स्म पद है उत्तर में जिसके ऐसे माङ् के योग में लङ् लकार और चकार से लुङ् लकार हो।

च्लि लुङि ३।१।४३॥

शप् को बाधकर च्लि प्रत्यय होय लुङ् परें रहते।

च्लेः सिच् ।३।१।४४॥

च्लि को सिच् आदेश होय।

गातिस्थाघुपाभूभ्यः सिचः परस्मैपदेषु ।२।४।७७॥

इणादेश गाधातु, स्थाधातु, घुसंज्ञकधातु, पिबादेशपाधातु, भू धातुओं से परें सिच् का लुक् होय।

भूसुवोस्तिङि ।७।३।८८॥

सार्वधातुक तिङ् परें रहते भू और सु धातु को गुण न होय।

न माङ् योगे ।६।४।७४॥

माङ् के योग में अट् और आट् का आगम न होय।

लिङ्निमित्ते लृङ् क्रियातिपत्तौ ।३।३।१३९॥

भविष्यत् अर्थ में धातु से लृङ् लकार होय क्रिया असिद्धि गम्यमान हो तो।

अत आदेः ।७।४।७०॥

अभ्यास के आदि अत् को दीर्घ होय।

आडजादीनाम । ६ । ४ । ७२ ॥

अजादि अंग को आट् का आगम होय लुङ्, लङ्, लृङ् परे रहने।

अस्तिसिचोऽपृक्ते ।७। ३।९६ ॥

विद्यमान सिच् प्रत्यय और अस् धातु से परे अपृक्त हल् को ईट् का आगम होय।

इट ईटि । ८।२।२८॥

इट् से परें सकार का लोप होय ईट् परें।

• सिजलोप एकादेशे सिद्धो वाच्यः •

एकादेश के कर्तव्य में सिच् लोप को सिद्ध कहना चाहिये।

सिजभ्यस्तविदिभ्यश्च । ३। ४। १०९॥

सिच् प्रत्यय और अभ्यस्त संज्ञक धातु या विद् धातु से परें ङित् सम्बन्धी झि को जुस् आदेश होय।

ह्रस्वं लघु । १।४। १० ॥

ह्रस्व को लघु कहते हैं।

संयोगे गुरु । १।४। ११ ॥

संयोग परें ह्रस्व गुरु होय।

भ्वादयः
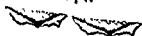
दीर्घं च । १ । ४ । १२ ॥

दीर्घ को गुरु कहते हैं।

पुगन्तलघूपधस्य च । ७ । ३ । ८६ ॥

पुगन्त और लघु वर्ण की उपधा अंग के इक् को गुण होय सार्वधातुक और आर्धधातुक परे।

असंयोगाल्लिट् कित् । १ । २ । ५ ॥

असंयोग से परे अपित् लिट्, कित् संज्ञक होय।

नेर्गदनदपतपदघुमास्यतिहन्तियाति द्रातिप्सातिवपतिवहतिशाम्यतिचिनोतिदेग्धिषु च । ८ । ४ । १७ ॥

उपसर्ग स्थित निमित्त से परे नि को णकार होय ग आदिधातु परे रहते।

कुहोश्चुः । ७ । ४ । ६२ ॥

अभ्यास के कवर्ग, हकार को चवर्ग आदेश होय।

अत उपधायाः । ७ । २ । ११६ ॥

उपधा के अत् को वृद्धि होय ञिति णिति प्रत्यय परे।

णलुत्तमो वा । ७ । १ । ९१ ॥

उत्तम पुरुष का णल् विकल्प से णित् होय।

अतो हलादेर्लघोः । ७ । २ । ७ ॥

हलादि लघु अकार को वृद्धि होय विकल्प से इडादि सिच् परस्मैपद परे रहते।

णो नः। ६। १। ६५॥

धातु के आदि णकार को नकार होय।

णोपदेशास्त्वनर्दनाटिनाथनाधनन्दनक्कनॄनृतः।

अर्द, नाटि, नाथ्, नाध्, नन्द्, नक्क, नॄ, नृत इन धातुओं को छोड़कर णोपदेश धातु जाननी चाहिये।

उपसर्गादसमासेऽपि णोपदेशस्य। ८। ४। १४॥

उपसर्ग स्थित निमित्त से परे णोपदेश धातु के नकार को णकार होय असमास में।

अत एकहल्मध्येऽनादेशादेर्लिटि। ६। ४। १२०॥

लिट् को मानकर आदेशादि नहीं हुए हैं जिसको ऐसा जो अंग उसके अवयव असंयुक्त हल् मध्यस्थ अकार को एत्व होय और अभ्यास का लोप होय कित्, लिट् परे।

थलि च सेटि। ६। ४। १२१॥

लिट् को मानकर आदेशादि नहीं हुए हैं जिसको ऐसा जो अंग उसके अवयव असंयुक्त हल मध्यस्थ अकार को एत्व होय और अभ्यास का लोप हो थल् सेटि परे।

आदिर्ञिटुडवः। १। ३। ५॥

उपदेश अवस्था में धातु के आदि ञि टु डु इत्संज्ञक हों

इदितो नुम् धातोः ७। १। ५८॥

इकार जिनमें इत् होय ऐसी धातु को नुम् होय।

तस्मान्नुड् द्विहलः । ७ । ४ । ७१ ॥

दो हल् हैं जिन धातुओं में ऐसी दीर्घीभूत अकार से परे नुट् का आगम होय।

वदव्रजहलन्तस्याचः । ७ । २ । ३ ॥

वद् धातु, व्रज् धातु और हलन्त धातुओं के अच् को वृद्धि होय सिच् परस्मैपद परे रहते।

ह्म्यन्तक्षणश्वसजागृणिश्व्येदिताम् । ७ । २ । ५ ॥

ह, म, य है अन्त में जिनके ऐसी धातु क्षण आदि धातु, ण्यन्त धातु, श्वि धातु और एदित् धातुओं को वृद्धि न होय इडादि परस्मैपद सिच् परे रहते।

गुपूधूपविच्छिपणिपनिभ्य आयः । ३ । १ । २८ ॥

गुपू, धूप, विच्छि, पणि, पनि, इन धातुओं से परे आय् प्रत्यय होय।

सनाद्यन्ता धातवः । ३ । १ । ३२ ॥

सन् से आदि लेकर कर्मणिङ् पर्यन्त प्रत्यय अन्त में हैं जिनके वे धातु संज्ञक होय।

आयादय आर्धधातुके वा । ३ । १ । ३१ ॥

आर्धधातुक के परे विकल्प से आयादि प्रत्यय [illegible]

[illegible]

इकार जिनमें इत् होय ऐसी धातु को नुम् होय ।

तस्मान्नुड् द्विहलः । ७ । ४ । ७१ ॥

दो हल् हैं जिन धातुओं में ऐसी दीर्घीभूत अकार से परे नुट् का आगम होय ।

वदव्रजहलन्तस्याचः । ७ । २ । ३ ॥

वद् धातु, व्रज् धातु और हलन्त धातुओं के अच् को वृद्धि होय सिच् परस्मैपद परे रहते ।

ह्म्यन्तक्षणश्वसजागृणिश्व्येदिताम् । ७ । २ । ५ ॥

ह, म, य हैं अन्त में जिनके ऐसी धातु क्षण आदि ण्यन्त धातु, श्वि धातु और एदित धातुओं को वृद्धि न होय इट् परस्मैपद सिच् परे रहते ।

गुपूधूपविच्छिपणिपनिभ्य आयः । ३ । १ । २८ ॥

गुपू, धूप, विच्छि, पणि, पनि, इन धातुओं से परे आय होय ।

सनाद्यन्ता धातवः । ३ । १ । ३२ ॥

सन् से आदि लेकर णिङ् पर्यन्त प्रत्यय अन्त में हैं वे धातु संज्ञक होय ।

आयादय आर्धधातुके वा ३ । १ । ३१ ॥

आर्धधातुक की विवक्षा में आयादि प्रत्यय विकल्प

॥ कास्प्रत्ययादाम् अमन्त्रे लिटि ॥

कास् वा अनेकाच धातुओं से परे आम् हो लिट् परे।

लिटि आम्कास्प्रत्ययान्तस्य नेत्संज्ञा।

लिट् परे आम् धातु और कास् धातु के आम विधान सामर्थ्य से आम् के म् का इत्संज्ञा नहीं होती है।

अतो लोपः । ६ । ४ । ४८ ॥

आर्धधातुक की उपदेश अवस्था में जो अदन्त धातु उसके अ का लोप होय आर्धधातुक परे रहते।

आमः । २ । ४ । ८१ ।

आम् से परे लुक् होय।

कृञ्चानुप्रयुज्यते लिटि । ३ । १ । ४० ॥

आम् है अन्त में जिनके ऐसी धातुओं से लिट् परक कृ भू अस् का अनुप्रयोग होय।

उरत् । ७ । ४ । ६६ ॥

अभ्यास के ऋवर्ण को अत् होय प्रत्यय परे।

द्विर्वचनेऽचि । १ । १ । ५९ ॥

द्वित्व निमित्तक अच् पर रहते अच् को आदेश न होय द्वित्व के कर्त्तव्य में।

——त्वात् । ७ । २ । ७० ॥

उपदेश अवस्था में जो एकाच अनुदात्त धातु उससे परे आर्धधातुक को इट् का आगम न होय।

ऊदृदन्तैर्यौतिरुक्ष्णुशीङ्स्नुनुक्षुश्विडीङ्श्रिभिः।
वृङ्वृञ्भ्यां च विनैकाचोऽजन्तेषु निहताः स्मृताः॥

ऊदन्तधातु, ऋदन्तधातु, यु, रु, क्ष्णु, शीङ्, स्नु, नु, टुक्षु, श्वि (टुओश्वि) डीङ्, श्रिञ्, वृङ्, वृञ्, इन धातुओं को छोड़ कर एकाच धातु अजन्तों में अनुदात्त जानना चाहिये। भाव यह है कि—

इन धातुओं में तो इट् होती है अन्यों में नहीं। एवं हलन्त धातु जो कान्तादियों में आगई है यह तो अनिट्, और जो नहीं आई वह सेट् जानना चाहिये। यही अन्तर है।

स्वरतिसूतिसूयतिधूञूदितो वा । ७ । २ । ४४ ॥

स्वरति, सूति, सूयति, धूञ्, ऊदित धातुओं से परे वलादि आर्धधातुक को इट् विकल्प से होय।

नेटि । ७ । २ । ४ ॥

इडादि सिच् परे हलन्त अङ्ग को वृद्धि न होय।

हलि च । ८ । २ । ७६ ॥

[illegible]

भ्वादयः

अकृत्सार्वधातुकयो दीर्घः । ७ । ४ । २५ ॥

अजन्त अङ्ग को दीर्घ हो यकारादि प्रत्यय परे कृत सार्वधातुक परे न होय तो ।

सिचि वृद्धिः परस्मैपदेषु । ७ । २ । १ ॥

इगन्त अङ्ग को वृद्धि होय परस्मैपद सिच् परे रहते ।

वा भ्राशभ्लाशभ्रमुक्रमुक्लमुत्रसित्रुटिलषः । ३ । १ । ७० ॥

भ्राश् भ्लाश् भ्रमु क्रमु क्लमु त्रसि त्रुटि लष् इन धातुओं से परे श्यन् प्रत्यय हो विकल्प से ।

क्रमः परस्मैपदेषु । ७ । ३ । ७६ ॥

क्रम्धातु को दीर्घ होय परस्मैपद शित् परे ।

पाघ्राध्मास्थाम्नादाण् दृश्यर्तिसर्ति शदसदो
पिबजिघ्रधमतिष्ठमनयच्छपश्यर्च्छधौशीयसीदाः । ७ । ३ । ७८ ॥

पा धातु को पिब, घ्रा को जिघ्र, ध्मा को धम, स्था को तिष्ठ, म्ना को मन, दाण् को यच्छ, दृश् पश्य, ऋ को ऋच्छ, सृ को धौ, शद् को शीय, सद् को सीद आदेश हो इन संज्ञक शकारादि प्रत्यय परे रहते ।

चिरादेर्लोऽन्तरङ्गत्वेन न गुणः ।

चिरादिक अन्तरङ्ग होने से गुण नहीं होता है ।

आत औ णलः । ७ । १ । ३४ ॥

आदन्त धातु से परे णल् को औकार आदेश होय।

आतो लोप इटि च । ६ । ४ । ६४ ॥

अजादि आर्धधातुक किन् ङित् और इट् परे आकार का लोप होय।

घुर्मास्थागापाजहातिसां हलि । ६ । ४ । ६७ ॥

घु संज्ञक धातु और मास्थादि धातुओं को एत्व होय धातुक किन् लिङ् परे।

आतः । ३ । ४ । ११० ॥

सिच् का लुक् होने पर आकारान्त धातु से ही परे को जुस् होय।

उस्यपदान्तात् । ६ । १ । ९६ ॥

अपदान्त अकार से उस् परे रहते पररूप एकादेश हो

आदेच उपदेशेऽशिति । ६ । १ । ४५ ॥

उपदेश में एजन्त धातु को आत्व हो शित परे न होय

वाऽन्यस्य संयोगादेः । ६ । ४ । ६८ ॥

घुमास्थादि धातु और अन्य संयोगादि धातु के आ को एत्व हो विकल्प से आर्ध धातुक किन् लिङ् परे।

यमरमनमातां सक् च । ७ । २ । ७३ ॥

उतश्च प्रत्ययादसंयोगपूर्वात्। ६ । ४ । १०६ ॥

असंयोग पूर्वक प्रत्यय के उकार से परें हि का लुक होय।

इषुगमियमां छः। ७ । ३ । ७७ ॥

इष्, गम्, यम् इन धातुओं को छ होय शित् परें।

गमहनजनखनघसां लोपः क्ङित्यनङि। ६ । ४ । ९८ ।

गम् हन् जन् खन् घस् इनकी उपधा का लोप हो अजादि किन् ङित् परें, अङ् परें न होय।

गमेरिट् परस्मैपदेषु। ७ । २ । ५८ ॥

गम् धातु से परें सादि आर्धधातुक को इट् का आगम होय परस्मैपद में।

पुषादिद्युताद्यॢदितः परस्मैपदेषु। ३ । १ । ५५ ॥

श्यन् विकरण पुषादि और द्युतादि तथा ऌदित धातु से परें च्लि को अङ् होय परस्मैपद परें रहते। प्रकृति प्रत्यय के मध्य में जो प्रत्यय होती है उसको विकरण कहते है।

॥ इति परस्मैपदिनः ॥

❀ आत्मनेपद प्रकरणम् ❀

टित आत्मनेपदानां टेरे। ३ । ४ । ७९ ॥

टित् लकार की आत्मनेपद टि को एत्व होय।

यस्मात् विधीयते सः। यहाँ आम् प्रत्यय से आत्मनेपद नहीं होता आत्मनेपद तो आम्प्रकृति एधादि धातु से ही आत्मने पद होता है आम्प्रत्यय परों का कोई अर्थ नहीं अतः अन्वय भी नहीं हुई।

सूत्रार्थ

आम् प्रकृति (एधादि धातु) के तुल्य अनुप्रयुज्यमान कृञ् भी आत्मने पद होता है। जैसे एध धातु आत्मने पद है तो कृञ् भी आत्मने पद हो गया और आम्प्रकृति गुपादि परस्मैपद है तो कृञ् भी परस्मै पदी होगी। उभय पदी तो उभय पदी होती है। यही सूत्र का भाव है।

लिटस्तझयोरेशिरेच् । ३ । ४ । ८१ ॥

लिट् स्थानीय त और झ को एश और इरेच् आदेश होय।

इणः षीध्वंलुङ्लिटांधोऽङ्गात् । ८ । ३ । ७८ ॥

इणन्त अंग से परे षीध्वं लुङ् लिट् सम्बन्धी धकार को ढकार होता है।

धि च । ८ । २ । २५ ॥

धकारादि प्रत्यय परे रहते सकार का लोप होय।

ह एति । ७ । ४ । ५२ ॥

तास् प्रत्यय और अस् धातु के सकार को हकार हो ए परे।
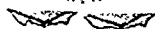
आमेतः । ३ । ४ । ९० ॥

लोट् के एकार को आम् होय।

सवाभ्यां वामौ । ३ । ४ । ९१ ॥

सकार, वकार से परे लोट् के एकार को क्रम से व, और आम आदेश होय।

एत ऐ । ३ । ४ । ९३॥

लोट लकार के उत्तम पुरुष एकार को ऐकार होय।

लिङः सीयुट् । ३ । ४ । १०२ ॥

लिङ् लकार को सीयुट् का आगम होय।

झस्य रन् । ३ । ४ । १०५ ॥

लिङ् लकार के झ को रन् आदेश होय।

इटोऽत् । ३ । ४ । १०६ ॥

लिङादेश इट् को अत् आदेश होय।

सुट् तिथोः । ३ । ४ । १०७ ।

लिङ् लकार के त, थ, को सुट् का आगम होय।

आत्मने पदेष्वनतः । ७ । १ । ५ ॥

अनकार से परे आत्मने पद में झ को अत् आदेश हो।

कमेर्णिङ् । ३ । १ । ३० ।

कम् धातु से णिङ् प्रत्यय होय धातु अर्थ में .

लघु परक उसको सन्वद्भाव कार्य हो णि परें अक् प्रत्याहार का लोप न हुआ हो तो।

सन्यतः। ७। ४। ७९॥

अभ्यास के अकार को इकार हो सन्वद्भाव विषय में।

दीर्घो लघोः। ७। ४। ९४॥

लघु अभ्यास को दीर्घ हो सन्वद्भाव विषय में।

* कमेश्च्लेश्चङ् वाच्यः *

• कम् धातु को च्लि को चङ् कहना चाहिये।

उपसर्गस्यायतौ। ८। २। १९॥

अय धातु परें है जिससे ऐसे उपसर्ग के रेफ को लत्व हो।

दयायासश्च। ३। १। ३७॥

दय्, अय्, आस्, इन धातुओं से परें आम् हो लिट् परें।

शुनिस्वाप्यो सम्प्रसारणम्। ७। ४। ५७॥

शुन् स्वपि, धातुओं के अभ्यास को सम्प्रसारण होय।

द्युद्भ्यो लुङि। १। ३। ९१॥

द्युतादि धातुओं से परें लुङ् को परस्मैपद हो विकल्प से।

वृद्भ्यः स्यसनोः। १। ३। ९२॥

वृतादि पांच धातुओं से परें परस्मैपद विकल्प से होय स्य सन परें

न वृद्भ्यश्चतुर्भ्यः । ७ । २ । ५९ ॥

वृतु, वृधु शृधु स्यन्दु इन चार धातुओं से परें सकारादि आर्धधातुक को इट् का आगम न हो, तङ् आन के अभाव में

न शसददवादिगुणानाम् । ६ । ४ । १२६ ॥

शस दद वकारादि धातु और गुण शब्द से विधान जो अकार उसके एत्व और अभ्यास का लोप न होय ।

तॄफलभजत्रपश्च । ६ । ४ । १२२ ॥

तॄ फल् भज् त्रप् इन धातुओं के अकार को एत्व और अभ्यास का लोप होय किन् लिट् सेट् थल परें ।

इत्यात्मनेपदिनः ।

❁ अथोभयपदिनः ❁

रिङ् शयग्लिङ्क्षु । ७ । ४ । २८ ॥

श, यक् यकारादि आर्धधातुक लिङ् परें रहते ऋकारान्त धातु को रिङ् आदेश होय ।

उश्च । १ । २ । १२ ॥

ऋवर्ण से परें झलादि लिङ् सिच् कित्वत् हों आत्मने पद में ।

लुङि च । २ । ४ । ४३ ॥

आर्धधातुक के विषय में हन् धातु को वध आदेश हो लुङ परे।

वधादेशोऽदन्तः

आर्धधातुकोपदेशे अकारान्तत्वादतो लोपः।

वध आदेश अदन्त है आर्धधातुक उपदेश अवस्था में आकार का "अतोलोपः" से लोप हो गया।

अचः परस्मिन्पूर्वविधौ । १ । १ । ५७ ॥

पर को मान कर के हुआ जो अच् को आदेश वह स्थानि के तुल्य होय यदि स्थानि भूत अच् से पूर्व में कोई विधि कार्य कर्तव्य होय तो।

उतो वृद्धिर्लुकि हलि । ७ । ३ । ८९ ॥

लुक के विषय में उत् को वृद्धि होय हलादि पित सार्व धातुक परे, अभ्यास को न होय।

(यदागमास्तद्गुणी भूतास्तद्ग्रहणेन गृह्यन्ते)

जिसको जो आगम होता है उसी के गुणी भूत होता है और उसी के ग्रहण से ग्रहण होता है।

(भाष्ये पित ङित, ङित पिन्नेति व्याख्यानात्)

भाष्य में पित ङित नहीं होता और ङित पित् नहीं बनता जाता

लङः शाकटायनस्यैव । ३ । ४ । १११ ॥
आदन्त से परे लङ् लकार की झि को जुस् विकल्प से हो ।

विदो लटो वा । ३ । ४ । ८३ ॥
विद् धातु से परे लट् लकार के परस्मैपद तिबादियों को णलादि आदेश होय विकल्प से ।

उपविदजागृभ्योऽन्यतरस्याम् । ३ । १ । ३८ ॥
उष् धातु विद धातु जागृ धातु से लिट् परे आम होय विकल्प से ।

(विदेरदन्तत्वप्रतिज्ञानादामि न गुणः)
विद धातु अदन्त होने से आम परे गुण नहीं होता है ।

विदाङ्कुर्वन्त्वित्यन्यतरस्याम । ३ । १ । ४१ ॥
विद धातु से लोट् परक आम होय और गुण का अभाव और लोट् का लुक् होय, लोडन्त कृ का अनुप्रयोग विकल्प से निपातन करते हैं ।

तनादि कृञ्भ्य उः । ३ । १ । ७९ ॥
तनादि धातु और कृ धातु से परे शप् को बाध कर उ प्रत्यय होय ।

अत उत्सार्वधातुके । ६ । ४ । ११० ॥
उप्रत्ययान्त कृ धातु के अकार को उकार होय सार्वधातुक कित् ङित् परे ।

• ऊर्णोतेराम्नेति वाच्यम् •

ऊर्णु धातु से आम् प्रत्यय न होय।

न न्द्राः संयोगादयः ।६।१।३॥

अच् से परे संयोगादि न द र को द्वित्व न होय।

विभाषोर्णोः ।१।२।३॥

इडादि प्रत्यय विकल्प से ङित्संज्ञक होय।

गुणोऽपृक्ते ।७।३।९१॥

अपृक्त हलादि पित् सार्वधातुक परे रहते ऊर्णु धातु को गुण हो।

ऊर्णोतेर्विभाषा ।७।२।६॥

ऊर्णु धातु को वृद्धि होय विकल्प से इडादि सिच् परस्मैपद परे रहते।

इत्यादयः।

अथ जुहोत्यादय प्रकरणम्

जुहोत्यादिभ्यः श्लुः ।२।४।७५॥

जुहोत्यादि गणी धातु से परे शप् का श्लु होय।

श्लौ ।६।१।१०॥

श्लु के निमित्त से धातु को द्वित्व न होय।

अदभ्यस्तात् ।७।१।४॥

अभ्यस्त संज्ञक धातुओं से परे झ को अत् आदेश हो।

णिजां त्रयाणां गुणः श्लौ । ७ । ४ । ७५ ॥

णिज् विज् विश् धातुओं के अभ्यास को गुण होय श्लु के विषय में।

नाभ्यस्तस्याचि पिति सार्वधातुके । ७ । ३ । ८७ ॥

अच् पित सार्वधातुक परे रहते अभ्यस्त संज्ञक धातुओं के लघूपध को गुण न होय।

इरितो वा । ३ । १ । ५७ ॥

इरित धातुओं से परे च्लि को अङ् होय विकल्प से परस्मैपद में।

इति जुहोत्यादयः ॥

अब आगे सूत्रों का अर्थ नहीं दिया गया है । इसका कारण कि यहां तक याद करने के बाद विद्यार्थी सूत्रों के अर्थ और पदों को स्वयं समझ लेते हैं।

अब प्रक्रियाओं की विधि लिखना प्रारम्भ किया जाता है क्योंकि यहां पर बड़े विद्यार्थियों की बुद्धि की आवश्यकता है।
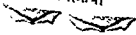
॥ अथण्यन्तप्रक्रिया ॥

देवदत्तोभवतीतिभवन्तं देवदत्तं यज्ञदत्त प्रेरयति-इति यज्ञदत्तो देवदत्तं भावयति। देवदत्तौ भवत इति भवन्तौ देवदत्तौ यज्ञदत्तौ प्रेरयत इति यज्ञदत्तौ देवदत्तौ भावयतः देवदत्ता भवन्तीति भवतो देवदत्तान् यज्ञदत्ताः प्रेरयन्ति इति यज्ञदत्ता देवदत्तान भावयन्ति—प्रथम पुरुषः।

अहम् भवामीति भवन्तं मां त्वं प्रेरयसि इति त्वं मां भावयसि, आवाम् भवाव इति भवन्तावावाम् युवाम् प्रेरयथ इति युवामावां भावयथः। वयं भवाम इति भवतोऽस्मान् यूयं प्रेरयथे ति यूयमस्मान् भावयथ = मध्यम पुरुषः।

त्वं भवसि भवन्तं त्वामहं प्रेरयामीति अहं त्वां भावयामि। युवां भवथ इति भवन्तौ युवामावां प्रेरयाव इति आवां युवां भावयावः, यूयं भवथेति भवतो युष्मान् वयम् प्रेरयाम इति वयं युष्मान भावयामः—उत्तमपुरुष

"णिचश्च" इस सूत्र से आत्मनेपद हो जाने पर भावयते-भावयेते-भावयन्ते प्र० पुरुष, भावयसे-भावयेथे भावयध्वे मध्यम पु०, भावये-भावयावहे-भावयामहे-उ० पु० इत्यादि रूप बनते हैं।

एवं लिटि बभूव देवदत्तो बभूवांसं देवदत्तं यज्ञदत्तः प्रेरयाञ्चकारेति यज्ञदत्तो देवदत्तं भावयाञ्चकार=

देवदत्तौ बभूवतुरिति बभूवांसा देवदत्तो यज्ञदत्तौ प्रेरयाञ्च क्रतुरिति यज्ञदत्तौ देवदत्तौ भावयाञ्चक्रतुः =

मत्रभूव । बभूवांसं तं ते प्रेरयाञ्चक्रुः-इति ते तं भावयाञ्चक्रुः । भावयाञ्चकर्थ । मवभूव इति बभूवांसं तं त्व प्रेरयांचकर्थ । इति त्वं तं भावयाञ्चकर्थ रामोबभूव, इति बभूवां सं रामं युवां प्रेरयाञ्चक्रथुः । इति युवां रामं भावयाञ्चक्रुः

वयं बभूविम, इति बभूवुषोऽस्मान्-यूयं प्रेरयाञ्चक्र• इति यूयमस्मान्-भावयाञ्चक्र ।

त्वं बभूविथ, इति बभूवांसं त्वामहं प्रेरयाञ्चकार-इति-अहं त्वां भावयाञ्चकार--भावयांचकर । युवां बभूवथुः--इति-बभूवांसौ युवामावां प्रेरयांचकृव, इति आवां युवां भावयाचकृव । यूयं बभूव, इति बभूवुषो युष्मान् वयं प्रेरयांचकृम, इति वयं युष्मान् भावयांचकृम एवमेयाम ऊ ह्यचम् ।

प्रेरयिता—प्रेरयिष्यति, प्रेरयतु—प्रैरयत् प्रेरयेत, प्रेर्यात् प्रैरिरत प्रैरयिष्यत् आत्मनेपदेष्वपि ज्ञेयमेवम् ॥

भावयिता, भावयिष्यति ते । भावयतु, ताम् । अभावयत त, भावयेत् . त । भाव्यात् . भावयिषीष्ट । अबीभवत्, त अभावयिष्यत्, अभावयिष्यत,

ष्टा गतिनिवृत्तौ स्थापयति, ते, स्थापयाञ्चकार, चक्रे, स्थापयिता, स्थापयिष्यति, ते स्थापयतु, तात् , स्थापयताम् . अस्थाप-

जिघत्स्यात्, अजिघत्सीत्, अजिघत्सिष्यत् कृधातोः-कर्तुमिच्छति-चिकीर्षति-चिकीर्षाञ्चकार चिकीर्षाम्बभूव, चिकीर्षामास-चिकीर्षिता-चिकीर्षिष्यति-चिकीर्षतु-तात् अचिकीर्षत्, चिकीर्षेत् चिकीर्ष्यात्, अचिकीर्षीत्, अचिकीर्षिष्यत् भूधातोः-भवितुमिच्छति-बुभूषति-बुभूषाञ्चकार बभूव-आस-बुभूषिता-बुभूषिष्यति बुभूषतु, अबुभूषत्, बुभूषेत्, बुभूष्यात् अबुभूषीत् अबुभूषिष्यत्-

॥ इति सन्नन्तप्रक्रिया ॥

॥ अथ यङन्तप्रक्रिया ॥

पुनः पुनरतिशयेन वा भवतीति-बोभूयते बोभूयाञ्चक्रे बभूव-आस-बोभूयिता-बोभूयिष्यते, बोभूयताम्, अबोभूयत बोभूयेत, बोभूयिषीष्ट, अबोभूयिष्ट, अबोभूयिष्यत-

व्रजगतौ-कुटिलं व्रजतीति वाव्रज्यते वाव्रज्याञ्चक्रे, बभूव-आस, वाव्रजिता-वाव्रजिष्यते, वाव्रज्यताम्, अवाव्रज्यत-वाव्रज्येत, वाव्रजिषीष्ट, अवाव्रजिष्ट-अवाव्रजिष्यत-

वृत धातोः। पुनः पुनरतिशयेन वा वर्तते-वरीवृत्यते-वरीवृत्याञ्चक्रे, बभूव-आस-वरीवर्तिता, वरीवर्तिष्यते-वरीवृत्यताम्-अवरीवृत्यत-वरीवृत्येत, वरीवृतिषीष्ट-अवरीवृतिष्ट, अवरीवर्तिष्यत--

एवं नरीनृत्यते, नरीनृत्याञ्चक्रे-बभूव-आस-नरीनर्तिता-

मया भूयते, लिटि, मवभूव, इति तेन वभूवे, त्वया, मया अन्यैश्च वेति, स भवितेति तेनभाविता, भविता, भविष्यते, भविष्यते भूयताम, अभूयत भूयेत, भाविषीष्ट भविषीष्ट, अभावि, अभाविष्यत अभविष्यत,

इस प्रक्रिया में अकर्मक धातुओं के रूप केवल प्रथम पुरुष के एकवचनमें ही होते हैं,क्यों कि युष्मदस्मद्भ्यां सामानाधिकरण्याभावादित्यादि वचनप्रामाण्य से। और अकर्मक धातु भी उपसर्ग वश से सकर्मक होजाती है, और सम्पूर्ण विभक्तियों में रूप चलते हैं। यथा चैत्र आनन्दमनुभवतीति चैत्रेणानन्दोऽनुभूयते, मैत्र आनन्दौ, अनुभवतीति, मैत्रेणानन्दावनुभूयेते राम आनन्दाननुभवतीति रामेणानन्दा अनुभूयन्ते, प्र० पु०

चैत्रस्त्वामनुभवतीति, चैत्रेणत्वं मनुभूयसे, चैत्रो युवामनुभवतीति चैत्रेण युवामनुभूयेथे, चैत्रो युष्माननुभवतीति चैत्रेणयूयमनुभूयध्वे, त्वं मामनुभवसीति, त्वयाऽहमनुभूये, त्वमावामनुभवसीति, त्वयाऽऽवामनुभूयावहे, रामोऽस्माननुभवतीति रामेणवयमनुभूयामहे

लिट् चैत्रआनन्दमनुबभूवेति, चैत्रेणानन्दोऽनुबभूवे अनुबभूवाते, अनुबभूविरे, इत्यादि—अनुभाविता, अनुभविता,अनुभाविष्यते, अनुभविष्यते, अनुभूयताम, अन्वभूयत, अनुभूयेत, ... अनुभविषीष्ट, अन्वभावि, अन्वभाविषाताम,अनुभ-

भञ्जधातोः । भज्यते, बभञ्जे भङ्क्ता, भङ्क्ष्यते, भज्यताम्, अभज्यत, भज्येत, भङ्क्षीष्ट, अभाजि, अभञ्जि, अभङ्क्ष्यत,
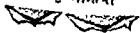
लभधातोः । लभ्यते, लेभे, लब्धा, लप्स्यते, लभ्यताम्, अलभ्यत, लभ्येत, लप्सीष्ट, अलाभि, अलम्भि, अलप्स्यत—

॥ इति भाव कर्म प्रक्रिया ॥

॥ अथ कर्म कर्तृ प्रक्रिया ॥

यदा कर्मैव कर्तृत्वेन विवक्षितं तदा सकर्मकाणामपि, अकर्मकत्वात्कर्तरि भावे च लकारः ।

जब कर्म को ही कर्ता की विवक्षा करें तब सकर्मक धातुओं को भी अकर्मक होने से भाव और कर्ता में लकार होता है। यथा—सूर्यःफलं पचतीति सूर्यं किं पचति फलं स्वयमेव पच्यते, पेचे, पक्ता, पक्ष्यते, पच्यताम् अपच्यत, पच्येत, पक्षीष्ट, अपाचि, अपक्ष्यत—रथकारः काष्ठं भिनत्तीति रथकारः किं भिनत्ति काष्ठः स्वयमेव भिद्यते—बिभिदे, भेत्ता, भेत्स्यते, भिद्यताम्, अभिद्यत, भिद्येत, भित्सीष्ट, अभेदि—अभेत्स्यत—भाव में फलेन पच्यते – काष्ठेन भिद्यते, इत्यादिर्ज्ञेयम्—

॥ इति कर्मकर्तृप्रक्रिया ॥

हेतु हेतुमान में लिङ् लकार विकल्प से होता है। जैसे,
कृष्णं नमेच्चेत् सुखं यायात्, कृष्णं नंस्यति चेत्सुखंयास्यति,
इष्ट भी होगया कृष्ण को नमस्कार करना हेतु कारण है सो सुख
पाना दूसरा हेतुमान कार्य मौजूद है। भविष्यत अर्थ में ही लिङ
होता है। अतः हन्तीतिपलायते, यहां नहीं हुआ—

विधि निमंत्रणामंत्रणेति सूत्र से भी विधि लिङ् होता है
जैसे यजेत आदि जानना।

॥ इति लकारार्थ प्रक्रिया ॥

॥ अथ कृदन्ते कृत्य प्रक्रिया प्रकरणम् ॥

त्वमेधेथाः, इति त्वया एध्येत, एध्येत इति एधितव्यम्
एधनीयम् (एध) त्वं धर्मं चिनुया इति त्वया धर्मश्चीयेत,
चीयेत, इति चेतव्यश्चयनीयो वा (चि)। त्वं मापान् पचेरिति
त्वया मापाः पच्येरन्, इति पचेलिमाः पक्तव्याः पचनीयाः (पच)
त्वं मरलान् भिन्द्या इति त्वया मरलाः भिद्येरन्, इति भिले-
लिमाः, भेत्तव्या. भेदनीयाः (भिद)। स्नात्यनेनेति. स्नानीयं
चूर्णम्। दीयते स्मै दानीयो विप्रः (दा)। चेतुं योग्यम् चेयम् (चि)।
दातुं योग्यम् देयम् (दाधनोः)। ग्लातुं योग्यम, ग्लेयम् (ग्लै-
धातोः)। शप्तुं योग्यम, शप्यम (शप्-धातोः)। लब्धुं योग्यम
लभ्यम् (लभ्-धातोः) एतुं योग्यः, इत्यः (इण धातोः)। स्तोतुं
योग्यः, स्तुत्यः (स्तु-धातोः) शासितुं योग्यः, शिष्यः (शासु-

कम्बल-दा धातुः)। गां मन्ददातीति, गोमन्दायः (द्वि०,गो·सम्·दा धातुः)। मूलानि विभुजतीनि, मूलविभुजोरथः (द्वि०, मूल-वि-भुज्)। महीं धरतीति, महीधः (द्वि०, मही-धृ धातुः)। कुं धरतीति, कुध्रः (द्वि०, कु-धृ धातुः)। कुरुषु चरतीति, कुरुचरः (सप्तम्यन्त, कुरु उपपद चर् धातुः) भिक्षासु चरतीति, भिक्षाचरः (सप्तम्यन्त, भिक्षा-चर् धातुः) सेनासु चरतीति, सेनाचरः (सप्तम्यन्त, सेना-चर् धातुः)। आदाय चरतीति, आदायचरः (आदाय-चर्)। यशः करोति तद्धेतुः यशस्करी विद्या (द्वि०, यशः—कृ धातुः)। श्राद्धं करोतीति तच्छीलः, श्राद्धकरः (द्वि०, श्राद्ध-कृ धातुः)। वचनं करोत्यानुलोम्य इति वचनकरः (द्वि० वचन-कृ धातुः) जनमेजयतीति, जनमेजयः (द्वि० जन-एजि धातुः)। प्रियं वदतीति, प्रियंवदः (द्वि० प्रिय-वद् धातुः)। वशं वदतीति, वशंवदः (द्वितीयान्त वश उपपद वद् धातु)। सुष्ठु शृणातीति, सुशर्मा (सु शृ)। प्रात एतीति, प्रातरित्वा (प्रातः-इण्)। विजायत इति, विजावा (वि-जन्)। ओणतीति अवावा (ओण्)। रूष्यतीति, रोट् (रूष) रिष्यतीति, रेट् (रिष्)। सुष्ठु गणयतीति, सुगण् (सु गण्)। उखाया स्रंसते उखास्रत् (पंचम्यंत उखा-स्रंस् धातुः)। पर्णानि ध्वंसते इति, पर्णध्वत् (पं० पर्ण-ध्वंस् धातुः)। वाहात् भ्रंशते इति, वाहभ्रट् (पं० वाह-भ्रंश्)। उष्णं भुंक्ते तच्छील इति, उष्णभोजी

मेढ्त्यनेन , मेढ्रम् (मिह्)। पतत्यनेन, पत्रम् (पत्)। दंशत्यनया, दंष्ट्रा (दंश्) नह्यत्यनया, नद्ध्री (नह्)। ऋच्छत्यनेन , अरित्रम् (ऋ)। लुनात्यनेन , लवित्रम् (लू)। धुनात्यनेन , धवित्रम् (धू)। सूतेऽत्यनेन , सवित्रम् (सू)। खनत्यनेन , खनित्रम् (खन्)। सहत्यनेन , सहित्रम् (सह्)। चरत्यनेन , चरित्रम् (चर)। पुनात्यनेन , पवित्रम् (पू)।

इति पूर्व कृदन्त प्रकरणम् ।

ॐ अथोणादय ॐ

करोतीति , कारुः (कृ)। वातीति , वायु (वा)। पातीति , पायुः (पा)। जयतीति , जायुः (जि)। मिनातीति, मायुः (मि)। स्वदतीति, स्वादुः (स्वद्)। साध्नोति परकार्यम्, (साधुः)। अश्नोति , आशुः (अश्) ।

इति-उणादय।

॥ अथ उत्तर कृदन्तम् ॥

कृष्णं द्रष्टयतीति हेतोः यातीति , कृष्णं द्रष्टुंयाति दर्शको वा (दश्)। कालः समयोवेला वा भोक्तनीति कालः समयोवेला वा भोक्तुम (भुज्)। पचनमिति , पाकः (पच्)। रञ्जनमिति , रागः (रञ्ज्)। रज्यत्यस्मिन्निति, रङ्गः (अधिकरणार्थे रञ्ज्)। निचीयतेऽस्मिन्निति , निकाय (नि-चिञ्)। निवा-

सिवणम्, स्यूः (सिव्)। अवनम्, ऊः (अव्)। भवनम्, मूः (मव्)। एषणम्, इच्छाः (इष्)। चिकीर्षणम्, चिकीर्षाः (सनन्त कृ)। पुत्रकाम्यनम्, पुत्रकाम्या (द्वि॰ पुत्र-काम्यच्)। ईहनम्, ईहा (ईह्)। कारणम्, कारणा (कारि)। हारणम्, हारणा (हारि)। हसितम्, हसितम् (हस्)। हसितम्, हसितम् (हस्)। दन्ताश्छाद्यन्तेऽनेनेति, दन्तच्छदः (दन्त-छादि)। आकुर्वन्त्यस्मिन्निति, आकरः (आ-कृ)। अवतरणम्, अवतारः (अव-तॄ)। अवस्तारणम्, अवस्तारः (अव-स्तॄ)। रमन्ते योगिनोऽस्मिन्निति, रामः (रम्)। अपमृज्यतेऽनेनव्याध्यादिरिति, अपामार्गः (अप-मृज्)। दुःखेनक्रियतेइति, दुष्करः (दुर-कृ)। ईषत् क्रियते, ईषत्करः (ईषत्-कृ)। सुखेन क्रियते, सुकरः (सु-कृ)। दुःखेन पीयते, दुष्पानः (दुर-पा)। सुखेन पीयते, सुपानः (सु-पा)। अलंदानामिति, अलंदत्वा गच्छति (अलं-दा)। पानम्इति, पीत्वा खलु (पा)। माकार्षीत् (मा-कृ)। अलंकरणम्, अलंकारः (अलं-कृ)। भोजनमिति भुक्त्वा व्रजति (भुज्)। भोजनम् पानमिति, भुक्त्वा पीत्वाव्रजति (भुज्-पा)। शयनमिति, शयित्वा (शीङ्)। करणमिति, कृत्वा (कृ)शोचनमिति, शुचित्वा शोचित्वा (शुच्)। लेखनमिति, लिखित्वा लेखित्वा (लिख्)। वर्तनमिति, वर्तित्वा (वृत्)। सेवनमिति सेवित्वा (सेव्)। एषणमिति, एषित्वा (इष्)।
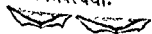
भोजनमिति, भुक्त्वा (भुज्) । शमनमिति, शमित्वा शान्त्वा (शम्) । देवनमिति, देवित्वा द्यूत्वा (दिव्) । धानमिति, हित्वा (धा) । हानमिति, हित्वा (हा) । हानमिति हात्वा (हाङ्) । प्रकृत्येति, प्रकृत्य (प्र-कृ) । अकृत्वा, नञ्समासोऽत्र ॥ स्मृत्वा स्मृत्वा स्मारम् स्मारम् नमति शिवम् (स्मृ) । पीत्वा पीत्वेति, पायम्पायम् (पा) । भुक्त्वा भुक्त्वेति, भोजं भोजम् (भुज्) । श्रुत्वा श्रुत्वेति, श्रावंश्रावम् (श्रु) । अन्यथा कृत्वेति. अन्यथा कारम् (अन्यथा-कृ) । एवं कृत्वेति, एवङ्कारम् (एवं-कृ) । कथं कृत्वेति, कथंङ्कारम् (कथं-कृ) । इत्थं कृत्वेति, इत्थंकारम भुङ्क्ते (इत्थं-कृ) । शिरोऽन्यथा कृत्वा भुङ्क्ते (कृ) ।

इत्युत्तरकृदन्तम् ।

❀ अथ विभक्त्यर्थप्रकरणम् ❀

उच्चैः नीचैः कृष्णः श्रीः ज्ञानम् प्रातिपदिकोदाहरण, तटः तटी तटम् लिङ्गमात्रे, द्रोणोव्रीहिः परिमाणमात्रे, एक द्वौ बहवः वचनमात्रे. हे रामा सम्बोधन प्रथमेति, हरिं भजति अनुक्त-कर्मणि. हरिं सेवते इति हरिः सेव्यते कर्मणि लकारः, लक्ष्म्या सेवितः कर्मणि निष्ठा. गां दोग्धिपयः गोर्दोग्धिपयः । बलिं याचते

वसुधामित्यत्र गर्मेणोर्मे वसुधाम् (पञ्चमी) तण्डुलैरोदनं पचति तण्डुलानोदनं पचति (सू०) । गर्गेभ्यः शतं दण्डयति गर्गान् शतं दण्डयति (पं०)। वृक्षमवचिनोति फलानि) वृक्षेऽवचिनोति फलानि (माणवकं पन्थानं पृच्छति, इत्यत्र माणवकान् पन्थानं पृच्छति वृक्षमवचिनोति फलानि (इत्यत्र वृक्षात् अवचिनोति फलानि) माणवकं धर्मं ब्रूते शास्ति वेत्यत्र । (माणवकाय धर्मं ब्रूते शास्ति)। शतं जयति देवदत्तमित्यत्र • शतं जयति देवदत्तात् सुधां क्षीरनिधिं मथ्नाति इत्यत्र सुधायै क्षीरनिधिं मथ्नाति । देवदत्तं शतं मुष्णाति इत्यत्र देवदत्तात् शतं मुष्णाति ग्राममजां नयति हरति कर्षति वा इत्यत्र ग्रामेऽजां नयतीत्यादि बलिभिक्षते वसुधाम् बलेर्भिक्षते वसुधाम् ॥ माणवकं धर्मं भाषते इति माणवकायधर्मभाषते (अभिधत्ते) वक्ति गदतीत्यादिषा इति द्वितीया, रामेण बाणेन-हतोवालीति कर्मणि प्रत्ययो यथा रामोबाणेन बालिनमवधीत् इति रामेण बाणेन वाली अवधि (इति हतः) अत्र रामबाणयो' स्थानेतृतीयाविभक्तौ कर्तृकरणयोरिति (सू) । विप्रायगांददाति,हरये नमः । प्रजाभ्यः स्वस्ति । अग्नये स्वाहा, पितृभ्यः स्वधा, दैत्येभ्यो-हरिरलं । प्रभुः समर्थः शक्त इत्यर्थ, इति चतुर्थी, प्रासादात्याति धावतोऽश्वात्पतति, इतिपञ्चमी, राज्ञः पुरुषः सतांगतम् सद्भिर्गतम सर्पिषा जानीते सर्पिः जानीते । मातुःस्मरति मातरं स्मरति
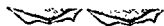
एधोदकस्योपस्कुरुते, एधोदकं उपस्कुरुते, भजे शंभोश्चरणयोः। भजेशंभोश्चरणौ, इति षष्ठी कटे आस्ते, स्थाल्यांपचति मोक्षे, इच्छास्तिसर्वस्मिन्नात्मास्ति तिलेषु तैलं दधिपुघृतम्-वनस्यदूरेऽन्तिकेवा, इति सप्तमी

॥ इति विभक्त्यर्थाः ॥

॥ अथ केवल समासः ॥

पूर्वंभूत इति लौकिक विग्रहः पूर्व अम् भूत सु इत्यलौकिकः भूतपूर्वः। वागर्थौ इव इतिलौ॰ वागर्थऔ, इव इत्यलौकिक विग्रहः वागर्थाविव।

॥ इति केवल समासः ॥

॥ अथाव्ययीभाव समासः ॥

हरौ इतिलौकिक हरि ङि अधि इत्यलौकिकः। अधिहरि। गाः पातीति गोपाः तस्मिन्नितिलौ, गोपा ङि अधि, इतिलौ॰ अधिगोपम॥ अधिगोपेन, अधिगोपेवा कृष्णस्यसमीपमिति लौ॰ कृष्ण ङस उप इत्यलौ॰ उपकृष्णम् मद्राणां समृद्धिरिति लौ॰ मद्र आम सु इत्यलौ॰ सुमद्रम्॥ यवनाना व्यृद्धिरिति लौ॰ यवनआम दुर इत्यलौ॰ दुर्यवनम्॥ मक्षिकाणामभाव इत्यलौ मक्षिकाआमनिर इत्यलौ॰ निर्मक्षिकम्। हिमस्यात्यय इतिलौ॰

हित सु इत्यलौ० गोहितम् ॥ गवेरक्षितमितिलौ० गो ङे रक्षित सु इत्यलौ० गोरक्षितम् ॥ गवे सुखमितिलौ० गो ङे सुख सु इत्यलौ० गोसुखम् ॥ चोराद्भयमितिलौ० चोर ङसि भय सु इत्यलौ० चोरभयम् ॥ स्तोकान्मुक्त इतिलौ० स्तोक ङसि मुक्त सु इत्यलौ० स्तोकान्मुक्तः अन्तिकादागत इतिलौ० अन्तिक ङसि आगत सु इत्यलौ० अन्तिकादागतः ॥ अभ्यासादागत इतिलौ० अभ्यास ङसि आगत सु इत्यलौ० अभ्यासादागतः ॥ दूरादागत इतिलौ० दूर ङसि आगत सु इत्यलौ० कृच्छ्रादागतः लौ० कृच्छ्र ङसि आगत सु इत्यलौ० । राज्ञः पुरुषः इतिलौ० राजन् ङस् पुरुष सु इत्यलौ० राजपुरुष ॥ पूर्वंकायस्येति लौ० पूर्व सु काय ङस् इत्यलौ० पूर्वकायः ॥ एवं अपरं कायस्येति लौ० अपर सु कायङस् इत्यलौ० अपरकायः पूर्वंछात्राणामितिलौ० पूर्व सु छात्र आमित्यलौ० अर्धंपिप्पल्या इतिलौ० अर्धसु पिप्पली ङस् इत्यलौ० अर्धपिप्पली अक्षेषु शौण्ड इतिलौ० अक्ष सुप् शौण्ड सु इत्यलौ० अक्षशौण्डः पूर्वं इषुकामशर्मी इषुकामशर्मीनिलौ० पूर्व सु इषुकामशर्मी सु इत्यलौ० पूर्वेषुकामशर्मी । मद्रवत्नेभ्यपय, इतिलौ० मद्रवत्नम् ङसि अम इत्यलौ० मद्रवंय ॥ उत्तरावृक्षा इतिलौ० उत्तर जस् वृक्ष जस् इत्यलौ० [illegible] इतिलौ० पञ्चन् जस् ब्राह्मण जस् इत्यलौ० । पूर्वस्यां [illegible] इतिलौ० पूर्वा ङि शाला ङि इत्यलौ० पौर्वशाल । [illegible] पञ्चन् जस् गो जस् [illegible] इत्यलौ०
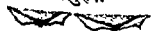
पंचगवधनः, पञ्चानां गवाम् समाहार इतिलौ० पञ्चन् आम् गो आम इत्यलौ पञ्चगवम् ॥ नीलञ्चतदुत्पलमितिलौ० नील सु उत्पलसु इत्यलौ० नीलोत्पलम्, कृष्णश्चासौ सर्प इतिलौ० कृष्ण सु सर्प सु इत्यलौ० कृष्णसर्पः । रामो जामदग्न्य इतिलौ० राम सु जामदग्न्य सु इत्यलौ० घन इवश्याम इतिलौ० घन सु श्याम सु इत्यलौ० घनश्यामः । शाकप्रियपार्थिव इतिलौ० शाकप्रिय सु पार्थिव सु इत्यलौ० शाकपार्थिवः देवपूजको ब्राह्मण इतिलौ० देवपूजक सु ब्राह्मण सु इत्यलौ० देवब्राह्मणः । न अश्व इतिलौ० न अश्व सु इत्यलौ० अनश्वः । न एकधा नैकधा न एकधा सु इत्यलौ० अत्रसु प्सु पेतिसमासः ॥ कुत्सित पुरुष इतिलौ० कु पुरुष सु इत्यलौ० कुपुरुषः । ऊरीकृत्ये त्यलौ० ऊरीकृत्य । थशुसं शुक्लं कृत्वेति शुक्लीकृत्य । पटत्पटत्कृत्येतिलौ० पटपटाकृत्य, सुष्ठु पुरुष इतिलौ० सु पुरुष सु इत्यलौ० सुपुरुषः ॥ प्रगत आचार्य्य इतिलौ० प्र आचार्य्य सु इत्यलौकिक, प्राचार्य्यः, अतिक्रान्तो माला मितिलौ० अतिमाला अमितिलौ० अतिमालः ॥ अवक्रुष्ट कोकिल येतिलौ० अव कोकिला सु इत्यलौ० अव कोकिलः, परिग्लानो-ऽध्ययनायेतिलौ० परि + अध्ययन ङे इत्यलौ० पर्य्यध्ययनः. निष्क्रान्त कौशाम्ब्या इतिलौ० निर + कौशाम्बी ङसि इत्यलौ० निष्कौशाम्बि [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

अश्वेन क्रीता इतिलौ० अश्व टा क्रीत इत्यलौ० अश्वक्रीती।
कच्छे पिबतीतिलौ० कच्छ ङि प इत्यलौ० कच्छपी अत्र सुपिस्थ
इति यदि योगविभागात् कप्रत्यय आतो लोप इटिचेति आलोपः।
द्वे अंगुली प्रमाणमस्येतिलौ० द्वि औ अंगुली औ इत्यलौ०
द्व्यंगुलम् ॥ निर्गतमंगुलीभ्य इतिलौ० निर् अंगुलीभ्यस्
इत्यलौ० निरंगुलम् ॥ अहश्च रात्रिश्चेतिलौ० अहन् सु रात्रि सु
इत्यलौ० अहोरात्रः ॥ अत्र चार्थद्वन्द्व इति समासः। रूरात्रि-
रथन्तरेषूपसंख्यानम् इतिनपुंसकत्वे अल्पेगुणेष्य सर्वा चासौ रात्रि
रितिलौ० सर्वा सु रात्रि सु इत्यलौ० सर्वरात्रः। अत्र पूर्वकाले
सर्वजरत्पुराण नवकेवलाःसमानाधिकरणे सर्वं नाम्नौवृत्तिमात्रे
पुंवद्भाव इति पुंवद्भावेनेति समासः। संख्याता चासौ रात्रि
रितिलौ० संख्याता सु रात्रि सु इत्यलौ० संख्यातरात्रः अत्र विशे-
षणं विशेष्येणेति समासः। पुंवत्कर्मधारय जातीयदेशी येषु
इति संख्याता इति साकारस्य अकारः। द्वयोः रात्र्योः समाहार
इति लौ० द्वि ओस् रात्रि ओस् इत्यलौ० द्विरात्रम्। त्रिसृणा
रात्रीणां समाहार इति लौ० त्रि आम रात्रि आमित्यलौ० त्रिरात्रम्
परमश्चासौ राजा इतिलौ० परम सु राजन् सु इत्यलौ० परमराजः
अत्र सन्महत्परमोत्तमोत्कृष्टाः पूज्यमानैरिति समासः। महांश्चासौ
राजा इतिलौ० महत् सु राजन् सु इत्यलौ० महाराज अत्रान्महत
नैव समास अहत्प्रकार इतिलौ० महत् सु जातीय सु इत्यलौ०

…

❋ अथ बहुव्रीहिसमास ❋

कण्ठे कालो यस्य स इति लौ० वि० कण्ठ ङि काल सु इत्यलौ० वि—प्राप्तमुदकं यं स इतिलौ० वि० प्राप्त सु-उदक सु इत्यलौ० वि०। प्राप्तोदको ग्रामः—ऊढो रथो येन स इतिलौ० ऊढ सु रथ सु —इत्यलौ०। ऊढरथोऽनड्वान् = उपहृतः पशुः यस्मै स इतिलौ० उपहृत सु पशु सु इत्यलौकिक० उपहृत पशु रुद्रः उद्धृत ओदनो यस्याः सेतिलौ० उद्धृत सु ओदन सु इत्यलौ० वि० उद्धृतौदनास्थाली। पीतानि अम्बराणि यस्य स इति लौ० पीत जस् अम्बर जस् इत्यलौकिक पीताम्बरो हरिः—वीराः पुरुषा यस्मिन् स इति लौ० वीर जस् पुरुष जस् इत्यलौ० वीरपुरुषको ग्रामः। प्रपतितं पर्णं यस्मात् स इतिलौ० प्रपतित सु पर्ण सु इत्यलौ० प्रपतित पर्ण प्रपर्णः, अविद्यमानः पुत्र इतिलौ० अविद्यमान सु पुत्र सु इत्यलौ० अपुत्रः, अविद्यमानपुत्रः चित्राः गावो यस्य स इतिलौ० चित्रा जस् गो जस् इत्यलौ० चित्रगुः = रूपवती भार्या यस्य स इतिलौ० रूपवती सु भार्या सु इत्यलौ० रूपवद्भार्यः = वामोरूः भार्या यस्य स इति लौ० वामोरू सु भार्या सु इत्यलौ० वामोरुभार्यः—कल्याणी पञ्चमी यासां रात्रीणां ता इति लौ० कल्याणी सु पञ्चमी सु इत्यलौ० कल्याणीपञ्चमा रात्रयः [illegible] स्त्री रमणी यस्य स इतिलौ० स्त्री सु [illegible] इत्यलौ० [illegible] कल्याणी [illegible] यस्य स [illegible] इत्यलौ० [illegible]

नासिके यस्य स इतिलौ० दीर्घ औ नासिका औ इत्यलौ०
दीर्घनासः, जलजे इवाक्षिणी यस्याः सेतिलौ० जलज औ
अक्षि औ० इत्यलौ० जलजाक्षी, दीर्घं सक्थिनी यस्मिन् स
कटे स इतिलौ० दीर्घ औ सक्थि औः इत्यलौ० दीर्घसक्थि शकटम्,
स्थूले अक्षिणी यस्याः सेतिलौ० स्थूल औ अक्षि औ इत्यलौ०
स्थूलाक्षा वेणुः यष्टिः, द्वौ मूर्धानौ यस्य स इतिलौ० द्विमूर्धः, त्रयो मू-
र्धानो यस्येतिलौ० त्रि जस् मूर्धन् जस् इत्यलौ० त्रिमूर्धः॥ अन्तर्लो-
मानि यस्य स इतिलौ० अन्तर् लोमन् जस् इत्यलौ० अन्तर्लोमः॥
बहिर्लोमानि यस्य स इति लौ० बहिर् लोमन् जस् इत्यलौ०
बहिर्लोमः– व्याघ्रस्य पादाविव पादौ यस्य स इति लौ० व्याघ्र
ङस् पाद औ० इत्यलौ० व्याघ्रपात्—हस्तिनपादाविव पादौ
यस्य स इतिलौ० हस्तिन् ङस् पाद औ० इत्यलौ० हस्तिपात्,
कुसूलस्य पादाविव पादौ यस्य स इति लौ० कुसूल ङस् पाद
औ० इत्यलौ० कुसूलपात्, द्वौ पादौ यस्य स इतिलौ० द्वि औ०
पाद औ इत्य लौ० द्विपात्=शोभनौ पादौ यस्य स इतिलौ०
सु पाद औ० इत्यलौ० सुपात्=उन्नतं काकुदं यस्य स इतिलौ०
उन् काकुद सु इत्यलौ० उत्काकुत्, विगतं काकुदं यस्य स
इतिलौ० विकाकुद सु–इत्यलौ० विकाकुत्। पूर्णं काकुदं यस्य स
इतिलौ० पूर्ण सु काकुद सु इत्यलौ० पूर्णकाकुत् पूर्णकाकुदः।
सुष्टु हृदयं यस्य स इति लौ० सु हृदय सु इत्यलौकि० सुहृन्मित्रम्
दुष्टु हृदयं यस्य स इतिलौ० दुर् हृदय सु इत्यलौ० दुर्हृदमित्रः

व्यूढमुरो यस्य स इतिलौ॰ व्यूढ सु उरस् सु इत्यलौ॰ व्यूढोरस्कः । प्रिय सर्पिर्यस्य स इतिलौ॰ प्रिय सु सर्पिस् सु इत्यलौ॰ प्रिय सर्पिष्कः = योगोयुक्तो यस्य स इतिलौ॰ योग सु युक्त सु इत्यलौ॰ युक्तयोगः । महद् यशो यस्य स इतिलौ॰ महत् सु यशस् सु इत्यलौ॰ महायशस्कः = महायशाः ।

॥ इतिबहुव्रीहिसमासः ॥

अथद्वन्द्वसमासः

ईश्वरं गुरुञ्च भजस्व अत्र समुच्चयः । भिक्षामट गाञ्चानयेत्यन्वाचयः । धवश्चखदिरश्चेतीतरेतरयोगः इतिलौ॰ धव सु खदिर सु इत्यलौ॰ धवखदिरौ छिन्धि । संज्ञा च परिभाषा चेत्यनयोः समाहार इतिलौ॰ संज्ञा सु परिभाषा सु इत्यलौ॰ संज्ञापरिभाषम् = दन्तानां राजा इतिलौ॰ दन्त आम् राजन् ङस् इत्यलौ॰ राजदन्तः । अर्थश्च धर्मश्चेतीतरेतरयोग इत्यलौ॰ अर्थ सु धर्म सु इत्यलौ॰ अर्थधर्मौ-धर्मार्थौ । हरिश्च हरश्चेतीतरेतर योग इतिलौ॰ हरि सु हर सु इत्यलौ॰ हरिहरौ = ईशश्च कृष्णश्चेतीतरेतर योग इतिलौ॰ ईश सु कृष्ण सु इत्यलौ॰ ईशकृष्णौ = शिवश्च केशवश्चेतीतरेतर योग इतिलौ॰ शिव सु केशव सु इत्यलौ॰ शिवकेशवौ । माता च पिता चेतीतरेतरयोग

०तिलौ० मातृ सु पितृ सु इत्यलौ० मातापितरौ, पितरौ वा
०णी च पादौ चेतीतरेतरयोग इतिलौ० पाणि औ पाद औ
इत्यलौ० पाणिपादम् मार्दंगिकश्च वैणविकश्चेतीतरेतर योग
इति लौ० मार्दङ्गिक सु वैणविक सु इत्यलौ० मार्दंगिक वैणविकम्
रथिकाश्चाश्वारोहाश्चेतीतरेतरयोग इतिलौ० रथिका जस्
अश्वारोह जस् इत्यलौ० रथिकाश्वारोहम् = वाक् चत्वक्चेत्यन
योः समाहार इतिलौ० वाक्त्वचम, त्वक् चस्रक् चेत्यनयोः
समाहार इतिलौ० त्वच् सु स्रज् सु इत्यलौ० त्वक्स्रजम्, शमी-
च दृषच्चेत्यनयोः समाहार इतिलौ० शमी सु दृषद् सु इत्यलौ०
शमीदृषदम्, वाक् चत्विट् चेत्यनयोः समाहार इतिलौ० वाच्
सु त्विष् सु इत्यलौ० वाक् त्विषम्, छत्रञ्चोपानच्चेत्यनयोः
समाहार इतिलौ० छत्र सु उपानह् सु इत्यलौ० छत्रोपानहम्
प्रावृट् च शरच्चेतीतरेतर योग इतिलौ० प्रावृष् सु शरद् सु
इत्यलौ० प्रावृट् शरदौ

॥ इति द्वन्द्वसमासः ॥

अथ समासान्ताः

आपोऽर्धमितिलौ० अप् ङस् अर्ध सु इत्यलौ० अर्धर्चः ०
विष्णो पूरितिलौ० विष्णु ङस् पुर् सु इत्यलौ० विष्णुपुरम्
विमला आपो यस्मिन्सरसि इतिलौ० विमल जस् अप् जस्

इत्यलौ॰ विमलापं सरः ॥ राज्ञो धूरितिलौ॰ राजन् ङस् धुर् सु इत्यलौ॰ राजधुरा ॥ अक्षस्य धूरितिलौ॰ अक्ष ङस् धुर् सु इत्यलौ॰ अक्षधूः ॥ दृढा धूर्यस्मिन् स इतिलौ॰ दृढा सु धुर् सु इत्यलौ॰ दृढ धूरक्षः । सख्युः पन्था इतिलौ॰ सखि ङस् पथिन् सु इत्यलौ॰ सखि पथ ॥ रम्यः पन्था यस्मिन्देशे, इतिलौ॰ रम्य सु पथिन् सु इत्यलौ॰ रम्य पथोदेशः ॥ गवामक्षीवेतिलौ॰ गो आम् अक्षि औ इत्यलौ॰ गवाक्षः प्रगतोऽध्वानमितिलौ॰ प्र अध्वन् अम् इत्यलौ॰ । प्राध्वोरथः, अत्यादय इति समासः शोभनो राजेतिलौ॰ । सु राजन् सु इत्यलौ॰ सुराजा । अतिशयितो राजेतिलौ॰ अति राजन् सु इत्यलौ॰ अति राजा स्यादित्यादिनेति नियमादेव परमराज इत्यादौ टच् प्रत्ययो भवति ।

॥ इति समासाः ॥

ॐ अथ तद्धिताः, तत्रादौ साधारण प्रत्ययाः ॐ

अश्वपतेरपत्यमिति विग्रहे, आश्वपतम् (अश्वपतिशब्द) गाणपतेरपत्यमिति गाणपतम (गणपति) दितेरपत्यमिति, दैत्यः (दिति) अदितेरपत्यमिति, आदित्यः (अदिति) आदित्यस्यापत्यमिति, आदित्यः (आदित्य) प्रजापतेरपत्यमिति प्राजापत्यः (प्रजापति) देवस्यापत्यमिति, दैव्यम् दैवम् (देव) । बहिर्भव
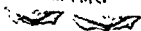
इति, वाहः वाहीकः (वहिम्)। गोरपत्यादिरिति, गव्यम् (गो)। उत्सस्यापत्यमिति औत्सः (उत्स)।

"इत्यपत्यादिविकारान्तार्थं साधारणप्रत्ययाः।

"अथापत्याधिकारः"

स्त्रिया अपत्यमिति, स्त्रैणः (स्त्री) पुंसोऽपत्यमिति, पौंस्नः (पुंस)। उपगोरपत्यमिति, औपगवः (उपगु) आश्वपतः, दैत्यः, औत्सः, स्त्रैणः, पौंस्न इति पूर्ववद् ज्ञेयम्। उपगोर्गोत्रापत्यमिति, औपगवः (उपगु)। गर्गस्यगोत्रापत्यमिति, गार्ग्यः (गर्ग-)। वत्सस्यगोत्रापत्यमिति वात्स्यः (वत्स-)। गर्गस्य गोत्रापत्यानि-इति,गर्गाः (गर्ग)।दक्षस्ययुवापत्यमिति,दाक्षायणः (दक्ष)। दक्षस्यापत्यमिति, दाक्षिः (दक्ष)। बाहोरपत्यमिति, बाहविः (बाहु)। उडुलोम्नोऽपत्यमिति, औडुलोमि (उडुलोमन्) उडुलोम्नोऽपत्यानीति उडुलोमाः (उडुलोमन्)। विदस्य गोत्रापत्यमिति, (वैदः)। विदस्य गोत्रापत्ये वैदौ (विद्) विदस्य गोत्रापत्यानि, विदाः (विद्-)। पुत्रस्यापत्यमिति, पौत्रः पौत्रौ, पौत्राः (पुत्र-)। एवं दुहितुर पत्यमिति, दौहित्रः (दुहितृ)। शिवस्यापत्यमिति शैवः (शिव-)। गंगाया अपत्यमिति, गाँगः (गङ्गा)। वसिष्ठस्यापत्यमिति, वासिष्ठः ऋषिभ्यः (वसिष्ठ)। विश्वामित्रस्या पत्यमिति, वैश्वामित्रः (विश्वामित्र)। अन्धक-

वाचिभ्यः, श्वफल्कस्यापत्यमिति,श्वाफल्कः (श्वफल्क)। वृष्णिभ्यः वसुदेवस्यापत्यमिति वासुदेवः (वसुदेव)। कुरुभ्यः नकुलस्यापत्यमिति नाकुलः (नकुल)। सहदेवस्यापत्यमिति साहदेवः (सहदेव)। द्वयोर्मात्रोरपत्यमिति, द्वैमातुरः (द्विमातृ-)। षण्णां मातॄणामपत्यमिति, षाण्मातुरः (षण् मातृ)। संमातुरपत्यमिति सांमातुरः (संमातृ)। भद्रमातुरपत्यमिति, भाद्रमातुरः (भद्रमातृ) विनतायाश्चापत्यमिति, वैनतेयः (विनता)। कन्यायाश्चापत्यमिति, कानीनो व्यासः, कर्णश्च (कन्या-)। राज्ञोऽपत्यं जातावितिरिति, राजन्यः (राजन्)। राज्ञोऽपत्यंमिति राजनः, (राजन्)।श्वशुरस्यापत्यमिति श्वशुर्यः (श्वशुर)। क्षत्रस्यापत्यं जातावितिरिति, क्षत्रियः (क्षत्र)। अन्यत्र क्षत्रस्यापत्यमिति, क्षात्रिः (क्षत्र)। रेवत्याश्चापत्यमिति, रैवतिकः (रेवती)। पंचालस्यापत्यं पंचालानां राजावेति पाँचालः (पंचाल)। पूरोरपत्यमिति पौरव। पाण्डोरपत्यं पाण्डु देशस्य राजावेति पाण्डयः (पाण्डु)। कुरोरपत्यं कुरुदेशस्य राजावेति, कौरव्य (कुरु)। निषधस्यापत्यमिति निषधानां राजावेति, नैषध्य (निषध)। इक्ष्वाकोरपत्यमिति इक्ष्वाकव (इक्ष्वाकु)। पंचालस्यापत्यानि पंचालानां राजान इति वा पंचाला (पंचाल)। कम्बोजस्यापत्यं कम्बोजानां राजावेति कम्बोज कम्बोजौ कम्बोजा (कम्बोज)। चोलस्यापत्य चोलाना राजावेति चोल (चोल)। शकस्यापत्यं शकानां
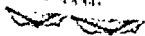
राजावेति, शाकः (शाक)। केरलस्यापत्यं केरलानां राजावेति, केरलः (केरल)। यवनस्यापत्यं यवनानां राजावेति, यवनः (यवन)।

॥ इत्यपत्याधिकारः ॥

॥ अथ रक्ताद्यर्थकाः ॥

रज्यतेऽनेनेति– रागः (रञ्ज्)। कषायेण रक्तमिति, काषायम् (कषाय)। पुष्येणयुक्तमिति पौषमहः (पुष्य)। वसिष्ठेनदृष्टमिति, वासिष्ठं साम (वसिष्ठ)। वामदेवेन दृष्टंसाम– वामदेव्यम् (वामदेव)। वस्त्रेण परिवृतो वास्त्रोरथः (वस्त्र)। शरावे उद्धृत- इति,शाराव ओदनः (शराव)। भ्राष्ट्रेषु संस्कृताः, भ्राष्ट्रायवाः (भ्राष्ट्र)। इन्द्रोदेवताऽस्येति, ऐन्द्रं हविः (इन्द्र)। पशुपतिर्देवताऽस्येति, पाशुपतम् (पशुपति)। बृहस्पतिर्देवताऽस्येति, बार्हस्पत्यम् (बृहस्पति)। शुक्रोदेवताऽस्येति, शुक्रियः (शुक्र)। सोमोदेवताऽस्येति, सौम्यम् (सोम)। वायुर्देवताऽस्येति. वायव्यम् (वायु)। ऋतुर्देवताऽस्येति, ऋतव्यम् (ऋतु)। पिता देवताऽस्येति, पित्र्यम (पितृ)। उषाःदेवतास्येति, उषस्यम् (उषस्)। पितुर्भ्राता, पितृव्यः (पितृ)। मातुर्भ्राता. मातुलः (मातृ)। मातुःपिता मातामहः (मातृ)। पितुःपिता पितामह (पितृ)। काकानां समूह इति काकम् (काक)। भिक्षाणां समूह इति भैक्षम (भिक्षा)। गर्भिणीनां समूहो गार्भिणम (गर्भिणी)।

युवतीनां समूह इति, यौवनम् (युवन्) । ग्रामाणां समूह इति ग्रामता (ग्राम) । जनानां समूह इति जनता (जन) । बन्धूनां समूह इति, बन्धुता गजानां समूह इति, गजता (गज) । सहायानां समूह इति, सहायता (सहाय) । अह्नांसमूहः इति अहीनः (अहन्) । सक्तूनांसमूहः, साक्तुकम् (सक्तु) । हस्तिनीनांसमूह, हास्तिकम् (हस्तिनी) । धेनूनां समूह, धैनुकम् (धेनु) । व्याकरणमधीते वेद वा, वैयाकरणम् (व्याकरण) । क्रममधीते वेद वा, क्रमकः (क्रम) । पदमधीते वेद वा पदकः (पद) । शिक्षामधीते वेद वा शिक्षकः (शिक्षा) । मीमांसामधीते वेद वा मीमांसकः (मीमांसा) ।

॥ इति रक्ताद्यर्थकाः ॥

❁ अथ चातुरर्थिकाः ❁

उदुम्बराः सन्त्यस्मिन्देशे, औदुम्बरो देशः (उदुम्बर) । कुशाम्बेननिर्वृत्ता नगरी, कौशाम्बी (कुशाम्ब) । शिवीनांनिवासोदेशः शैवः (शिवी) । विदिशायाअदूर भवं नगरमिति, वैदिशम् (विदिशा) । पंचालानां निवासोजनपदः, पञ्चालाः (पञ्चाल) कुरूणांनिवासोजनपदः कुरवः (कुरु) । अङ्गानां निवासोजनपदः अङ्गाः (अङ्ग) । वङ्गानां निवासोजनपदः वङ्गाः (वङ्ग) । कलिङ्गानां निवासोजनपदः कलिङ्गाः (कलिङ्ग) । वरणानामदूरभवं नगरं वरणाः (वरणा) । कुमुदाः सन्त्यस्मिन्निति कुमुदान्

प्राच्यम् (प्राञ्च्)। अवाचिभव इति, अवाच्यम् (अवाञ्च्)। उदीचिभव इति, उदीच्यम् (उदञ्च्)। प्रतीचिभव इति, प्रतीच्यम् (प्रत्यञ्च्)। अमाभव इति, अमात्यः (अमा)। इहभव इति, इहत्यः (इह)। क्वभव इति, क्वत्यः (क्व)। ततःभव इति, ततस्त्यः (तत)। तत्रभव इति, तत्रत्यः (तत्र)। नित्रांभव इति, नित्यः (नि)। शालायांभव इति, शालीयः (शाला)। मालायांभव इति मालीयः (माला)। तस्याऽयमितितदीयः (तत्) देवदत्तस्यायमिति देवदत्ती यः दैवदत्तः (देवदत्त) गढदेशेभव इति गढीयः (गढ) युवयोर्युष्माकं वायमिति युष्मदीयः यौष्माकीणः, यौष्माकः (युष्मद्) आवयोरस्माकंवाऽयमिति, अस्मदीयः, आस्माकीन., आस्माकः, (अस्मद्)। तवायमिति, तावकीनः, तावकः (तव) ममाऽयमिति, मामकीनः, मामकः, मदीयः (मम)। तवपुत्र इति, त्वत्पुत्रः (तव पुत्र)। ममपुत्र इति, मत्पुत्रः (मम पुत्र)। मध्येभव इति, मध्यमः (मध्य)। कालेभव इति, कालिकम् (काल)। मासेभवमिति, मासिकम् (मास)। सम्वत्सरे भवमिति, साम्वत्सरिकम् (सम्वत्सर)। सायंप्रातर्भवतीति, सायंप्रातिकः (सायंप्रातर्) पुनः पुनर्भवतीति पौनः पुनिकः (पुनःपुनः) प्रावृषिभव इति, प्रावृषेण्य (प्रावृष्) सायभवमिति, सायन्तनम् (सायम्)। चिरभवमिति चिरन्तनम् (चिर)। प्राह्णे भवमिति प्राह्णेतनम

देवदत्तादागतमिति देवदत्त रूप्यम्, दैवदत्तम् (देवदत्त) वैषमादागतमिति विषमीयम् (विषम)। ममादागतमिति, ममकमयम् (मम)। देवदत्तादागतमितिदेवदत्तमयम् (देवदत्त) हिमवतः प्रभवतीति हैमवती गङ्गा (हिमवत्)। स्रुघ्नमभिनिष्क्रामतीति स्रौघ्नंकान्यकुब्जद्वारम् (स्रुघ्न) शारीरकमधिकृत्य कृतोमन्थः, इति शारीरकीयम् (शारीर) स्रुघ्नोनिवासोऽस्येति-स्रौघ्नः (स्रुघ्न) पाणिनिनाप्रोक्तमितिपाणिनीयम् (पाणिनि)। उपगोरिदमिति औपगवम् (उपगु)।

॥ इति शैषिकाः ॥

❋ अथ विकारार्थकाः ❋

अश्मनोविकार इति आश्मः (अश्मन्)। अश्मनोविकार इति आश्मन' (अश्मन्)। मृत्तिकाया विकारइति मार्त्तिकः (मृत्तिका)। मयूरस्यावयवो विकारोवेति मायूरः (मयूर)। मूर्वाया विकारोऽवयवोवान, मौर्वं काण्डं भस्मवा (मूर्वा)। पिप्पलस्या वयवो विकारो वेति पैप्पलम् (पिप्पल)। अश्मनोऽवयवो विकारोवेति अश्ममयम्,आश्मनः (अश्मन)। मुद्गस्यावयवो विकारो वेतिमौद्ग' सूपः (मुद्ग)। कर्पासस्यावयववोविकारो वेतिकार्पासमाच्छादनम् (कर्पास) आम्रस्यविकारोऽवयवो वेति आम्रमयम (आम्र। गोःपुरीषमिति गोमयम् (गो)। गोर

❀ अथ यदधिकारः ❀

रथं वहतीति रथ्यः (रथ) युगं वहतीति, युग्यः (युग प्रासङ्गं वहतीति प्रासङ्ग्यः (प्रासङ्ग) धुरं वहतीति धुर्यः, धौरे (धुर्) नावातार्यमिति नाव्यं, जलम् (नौ) वयसातुल्योवयस्य (वयस्) । धर्मेण प्राप्यमिति धर्म्यम् (धर्म) । विषेणवध्य मिति विष्यः (विष)मूलेनआनाम्यमितिमूल्यम् (मूल) सीतया समि मिति सीत्यं क्षेत्रम् (सीता) तुलया समितमिति तुल्यं (तुला अग्रेसाधुरिति अग्रयः (अग्र) सामसुसाधुरिति सामन्य (सामन) कर्मणु साधुरिति कर्मण्यः (कर्मन्) शरणे साधुरिति शरण्य (शरण) सभायां साधुरिति सभ्यः (सभा) ।

॥ इति यतोऽवधिः प्राग्धितीयाः ॥

❀ अथ छयतोरधिकारः ❀

शङ्कवेहितमिति, शङ्कव्यंदारु (शङ्कु) गवेहितमितिगव्यम् (गो) नाभयेहित इति नभ्योक्षः (नाभि) नभ्यमञ्जनं वा (नाभि वत्सेभ्यो हित इति, वत्सीयोगोधुक् (वत्स) । दन्तेभ्यो हितमिति दन्त्यम् (दन्त) । कण्ठेभ्योहितमिति, कण्ठ्यम् (कण्ठ) नासिकायै हितमिति नस्यम् (नासिका) आत्मने हितमिति आत्मनीनम (आत्मन) विश्वजनेभ्यो हितमिति विश्वजनीनम

॥ अथ त्वतलोरधिकारः ॥

ब्राह्मणेनतुल्यमिति ब्राह्मणवद् अधीते (ब्राह्मण) पुत्रेणतुल्यः स्थूलः। मथुरायामिवेति मथुरावत् स्रुघ्ने प्राकारः (मथुरा) चैत्रस्येवेति चैत्रवन्मैत्रस्य गावः (चैत्र) गोर्भावोगोत्वम्-गोता (गो) स्त्रियाःभाव इति स्त्रीत्वं स्त्रीता स्त्रैणम् (स्त्री) पुंसोभाव इति पौंस्नः (पुंस) पुंस्त्वं पुंस्ता पृथोर्भाव इति प्रथिमा, पार्थवम् (पृथु) मृदोर्भाव इति म्रदिमा, मार्दवम् (मृदु) शुक्लस्यभाव इति शौक्ल्यम् शुक्लिमा (शुक्ल) दृढस्यभाव इति दार्ढ्यम्, द्रढिमा (दृढ) जडस्यभावकर्मवेति जाड्यम् (जड) मूढस्यभावः कर्मवेति मौढ्यम् (मूढ) ब्राह्मणस्यभाव कर्मवेति ब्राह्मण्यम (ब्राह्मण) सख्युर्भावः कर्मवेति सख्यम् (सखि) कपेर्भावः कर्मवेति कापेयन (कपि) ज्ञातेर्भाव कर्मवेति ज्ञातेयम (ज्ञाति) सेनापतेर्भावः कर्मवेति सैनापत्यम् (सेनापति) पुरोहितस्यभावः कर्मवेति पौरोहित्यम् (पुरोहित)

॥ इति त्वतलोरधिकारः ॥

॥ अथ भवनाद्यर्थकाः ॥

मुद्गानां भवनं क्षेत्रमिति मौद्गीनम (मुद्ग) व्रीहीनांभवनंक्षेत्रमिति व्रैहेयम् (व्रीहि) शालीनांभवनं क्षेत्रमिति शालेयम (शाली)

दोहस्यविकार इति हैयङ्गवीनम् (ह्योगोदोह) तारकाः
ता अस्येति तारकितंनभः (तारक) पण्डा संजाता अस्येति
ज्ञः (पण्डा) ऊरू प्रमाणमस्येति ऊरुद्वयसम्, ऊरुदघ्नम्,
ऽमात्रम् । यत्परिमाणमस्येति यावान् (यत्) तत्परिमाण-
येति तावान् (तत्) एतत्परिमाण मस्येति एतावान् (एतद्)
व अवयवा अस्येति पंचतयम् (पंचन्) द्वौ अवयवा अस्येति-
यम्, द्वितयम् (द्वि) त्रयोऽवयवा अस्येति त्रयम्, त्रितयम्
(त्रि) उभौ, अवयवावस्येति उभयम् (उभ) एकादशानां पूरण
इति, एकादशः,(एकादशन् । पञ्चानां पूरण इति पञ्चमः (पञ्चन्)
विंशतेः पूरण इति विंशः (एकादश इति पूर्ववद्विग्रहः) षण्णां
पूरण इति षष्ठः (षष्) कतीनां पूरण इति कतिथः (कति)
तिपयानां पूरण इति कतिपयथः (कतिपय) चतुर्णां पूरणः
चतुर्थः (चतुर्) द्वयोः पूरण इति द्वितीयः (द्वि) त्रयाणां
पूरण इति तृतीयः (त्रि) छन्दोऽधीते-इति श्रोत्रियः (छन्दस्
पूर्वं कृतमनेनेति पूर्वी (पूर्व) कृतपूर्वनेनेति कृतपूर्वी (कृतपूर्व
इष्टमनेनेति इष्टी (इष्ट) अधीतमनेनेति अधीती (अधीत) ।

॥ इति भवनाद्यर्थकाः ॥

॥ अथ मत्वर्थीयाः ॥

गावोऽस्यास्मिन् वा सन्तीतिगोमान् (गो) गरुतोऽस्

रिमन्वामन्तीतिगरुत्मान् (गरुत्) विद्वानस्त्यस्मिन्वेति विदुष्मान् (विद्वस्) शुक्लोगुणोऽस्यास्तीतिशुक्लः पटः (शुक्ल) कृष्णोगुणोऽस्यास्तीतिकृष्णः पट। चूडास्यास्मिन्नस्तियेति चूडालः चूडावान (चूडा) शिखास्यास्मिन्नस्तिवेतिशिखावान् दीपः मेधाऽस्यास्मिन्नस्तिवेतिमेधावान्। लोमास्यास्मिन्नस्तिवेति लोमशः, लोमवान् (लोमन्)रोमास्यास्मिन्नस्तियेति रोमशः रोमवान् (रोमन्) पामाऽस्यास्मिन्नस्तियेति पामनः। अङ्गानि अस्याः सन्ति इति अङ्गना (अंग)लक्ष्मी रस्यास्तीति लक्ष्मणः लक्ष्मी।पिच्छ अस्यास्तीति पिच्छिलः,पिच्छवान्(पिच्छ)उन्नतादन्ता अस्यसंतीति दन्तुरः।केशा अस्य,सन्ति केशवः, केशी, केशिकः, केशवान्। मणिरस्यास्तीति मणिवः। अर्णांसि जलानि अस्य सन्तीति अर्णवः। दण्डोऽस्यास्तीति दण्डी, दण्डिकः। व्रीहिरस्यास्तीति व्रीही, व्रीहिकः। यशोस्यास्तीति यशस्वी,यशस्वान.(यशस्)मायास्यास्तीति मायावी। मेधाऽस्यास्तीति मेधावी। स्रगस्यास्तीति स्रग्वी (स्रज्) वागस्यास्तीति वाग्मी (वाच्) अर्शोऽस्यविद्यते अर्शसाः अहमहः। विद्यते (अहंयुः) अहमित्यव्ययम् (अहंकारवान्) शुभमस्यविद्यते शुंभयुः, शुभान्वितः। अव्ययम्।

॥ इति मत्वर्थीयाः ॥

॥ अथ प्राग्दिशीयाः ॥

कस्मादितिकुतः (किम्)। अस्मादिति इतः (इदम्)।

प्राग्दिशीयाः
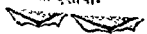
एतस्मादिति अतः (एतद्) । अमुष्मादिति अमुतः (अदस्) । यस्मादिति यतः (यत्) । तस्मादिति ततः (तद्) । बहुभ्यइति बहुतः (बहु) द्वाभ्याम् । परिइति परितः, सर्वेन इत्यर्थः (परि) । अभि, इति अभितः, उभयत इत्यर्थः (अभि) । कस्मिन्निति कुत्र (किम) । यस्मिन्निति यत्र (यत्) । तस्मिन्निति तत्र (तद्) । बहुषु इति बहुत्र (बहु) । अस्मिन्निति इह (इदम्) । कस्मिन्निति कुत्र (किम) । स भवानिति ततो भवान (तत्र भवान्) । तं भवन्तमिति ततो भवन्तं (तत्र भवन्तम्) । स दीर्घायुः-ततो दीर्घायुः-तत्र दीर्घायुः । स देवानाम्प्रियः, ततो देवानाम्प्रियः, तत्र देवानाम्प्रियः (तद्) । स आयुष्मान्, तत आयुष्मान्, (तद्) । सर्वस्मिन् काले इति सदा सर्वदा (सर्व) । अन्यस्मिन् काले इति अन्यदा (अन्य) । कस्मिन् काले इति कदा (किम्) । यस्मिन् काले इति यदा (यत्) । तस्मिन् काले इति तदा (तत्) । सर्वस्मिन्निति सर्वत्र देशे (सर्व) । अस्मिन्काले इति एतर्हि (इदम) । अस्मिन्निति इह देशे (इदम्) कस्मिन् काले कर्हि, यर्हि, तर्हि, इति विग्रहपूर्वयन एतस्मिन्काले एतर्हि, (एतद्) । तेन प्रकारेण तथा (तद्) येन प्रकारेण यथा (यद्) । अनेन प्रकारेण एतेन वा, इत्थम (इदम्, एतद्) । केनप्रकारेण कथम् (किम) ।

॥ इति प्राग्दिशीयाः ॥

❋ अथ प्रागिवीयाः ❋

अयमेषामतिशयेनाढ्य इति आढ्यतमः (आढ्य) अयमेषामतिशयेन लघुरिति, लघुतमः, लघिष्ठः (लघु) अयमेषामतिशयेन किमिति, किन्तमाम् (किम्) अयमेषामतिशयेन प्राह्णे इति प्राह्णेतमाम् (प्राह्णे) अयमेषामतिशयेन पचतीति, पचतितमाम् (पचति) अयमेषामतिशयेनोच्चैरिति, उच्चैस्तमाम, उच्चैस्तमम्तरः । अयमनयोरतिशयेन लघुरिति, लघुतरः, लघीयान । उदीच्याः प्राच्येभ्योऽतिशयेनपटव इति पटुतराः, पटीयांसः । अयमेषामतिशयेन प्रशस्य इति श्रेष्ठः (प्रशस्य) अयमनयोरतिशयेन प्रशस्य इति श्रेयान्, ज्येष्ठः, ज्यायान् (प्रशस्य) अतिशयेनबहुरितिभूमा, भूमान्, भूयिष्ठः (बहु) अतिशयेन स्रग्वीति स्रजिष्ठः, स्रजीयान् (स्रज्) अतिशयेन त्वग्वान्-इति त्वचिष्ठः, त्वचीयान् (त्वच्) ईषद् दूनोविद्वानिति विद्वत्कल्प, विद्वद्देश्य, विद्वद्देशीयः (विद्वद्) । ईषद्दूनः पचति इति पचतिकल्पम (पचति) ईषद्दूनः पटुरिति बहुपटुः, पटुकल्प (पटु) ईषद्दूनोयजतीति यजतिकल्पम् (यजति) । अज्ञातोऽश्व इति अश्वकः (अश्व) उच्चैरेयेतिउच्चकैः । नीच्चैरेवेतिनीच्चकैः (उच्चैस्, नीच्चैस्) सर्वैरेवेतिसर्वकैः, (सर्व) युष्माभिरेवेतियुष्मकाभिः (युष्मद्) युवयोरेवेतियुवकयोः । त्वयैवेतित्वयका (युष्मद्)
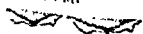
...ऽश्व इति अश्वतरः। अनयोर्मध्ये को वैष्णव इति कतरो-वैष्णवः। ययोर्मध्ये यो वैष्णव इति यतरः। तयोर्मध्ये स वैष्णव इति ततरः। भवतां मध्ये कः पटु इति भवतां कतमः पटुः। येषांमध्ये यः पटु इति यतमः, तेषांमध्ये स पटु इति ततमः। एकः, 'एकोऽपि'। (त्यदादि शब्द)।

॥ इति प्राग्दिशीयाः ॥

— अथ स्वार्थिकाः —

अश्व इव प्रतिकृतिरिति, अश्वकः। अश्व एवेति अश्वकः (अश्व)। प्रकृतमन्नमिति अन्नमयम् (अन्न) प्रकृतमपूपमिति अपूपमयम् (अपूप) प्राचुर्येण प्रस्तुतानि अन्नान्यस्मिन् यज्ञे इति अन्नमयोयज्ञः (अन्न) प्राचुर्येण प्रस्तुतानि अपूपान्यस्मिन् पर्वणीति, अपूपमयं पर्व (अपूप) प्रज्ञ एवेति प्राज्ञः प्राज्ञी, स्त्री (प्रज्ञ) देवता इति दैवतः (देवता) बन्धुरेवेति बान्धवः (बन्धु) बहूनि ददातीति बहुशः (बहु) अल्पं ददातीति अल्पशः (अल्प) आदिरेवेति आदितः (आदि) मध्य एवेति मध्यतः। (मध्य) अन्त इति अन्ततः (अन्त) पार्श्व इति पार्श्वतः (पार्श्व) स्वरेणेति स्वरतः (स्वर)। वर्णेनेति वर्णतः (वर्ण)। अकृष्णं कृष्णं सम्पद्यमानं करोतीति कृष्णीकरोति। अगङ्गा गङ्गा सम्पद्यमानो भवतीति गङ्गीभवति। अगङ्गा गङ्गा सम्पद्यमाना तथा स्यादिति

गङ्गीस्यात्। अदोषा दोषा सम्पद्यमानं भूतमिति दोषाभूतमहः। अदिवादिवा सम्पद्यमाना भूता इति दिवाभूता रात्रिः। कृत्स्नं शस्त्र मग्निः सम्पद्यत इति अग्निसाद्भवति। दधि सिञ्चति। अनग्नि रग्निः सम्पद्यमानो भवतीति अग्नीभवति। पटत् पटदिति सम्पद्यतेतं करोतीति पटपटा करोति। अनीषत्, ईषत् सम्पद्यतेतं करोतीति ईषत्करोति। श्रत्करोति। खरट खरट इति सम्पद्यतेतं करोतीति खरटखरटा करोति। पटिति करोति।

॥ इति स्वार्थिकाः ॥

— इति तद्धिताः —

॥ अथ स्त्री प्रत्यय प्रकरणम् ॥

अजत्व जातिविशिष्टेति-अजा (अज)। एडकत्व जातिविशिष्टेति एडका (एडक)। अश्वत्व जातिविशिष्टेति अश्वा (अश्व)। चटकत्व जातिविशिष्टेति चटका (चटक)। मूषिकत्व जातिविशिष्टेति मूषिका (मूषिक)। बालकत्व वयो-विशिष्टेति बाला (बाल)। वत्सत्व वयो विशिष्टेति वत्सा (वत्स)। होड्त्व वयो विशिष्टेति होड़ा (होड़)। मन्दत्व गुण विशिष्टेति मन्दा (मन्द)। विलातत्व वयो विशिष्टेति विलाता (विलात)। मेधत्व गुण विशिष्टेति मेधा (मेध)। गङ्गत्व जातिविशिष्टेति गङ्गा (गङ्ग) सर्वत्व जाति विशिष्टेति

'किति चेति वृद्धौ च । अलोपे । लवणपत्य मस्या इति लावणि लवणशब्दात्' लवणाट्ठञ् इति ठञि ठस्येकादेशो वृद्धौ अलोपे च या इव पश्यतीति यादृशी, यत्-दृश् धातोः । त्यदादिषु दृशोना-लोचने कञ्चेति 'कञ्' आमर्वनाम', इति तकाराकारे मवर्ण दीर्घे ङीपि अलोपे । एति गच्छतीति (या) इत्वरी इ धातोः 'इण्णशजि सर्तिभ्यः करप्' इति करप् ह्रस्वस्यपिति कृति तुक्, इति तुकि, ङीपि अलोपे । स्त्रिया अपत्य स्त्रीति स्त्रैणी स्त्रीशब्दात् स्त्रीपुंसाभ्यामिति-नञि. वृद्धौ ङीपि अलोपे। पुंसोऽपत्यं स्त्री पौंस्नी, पुंसाभ्यामिति स्नञ् वृद्धौ 'स्कोः संयोगाद्योरिति' स लोपे ङीपि अलोपे । शक्तिः प्रहरणं मस्या इति शाक्तीकीशक्ति शब्दात् शक्तियष्ट्योरीकक् इति ईकक् किति चेति वृद्धौ यस्येति इलोपे, यष्टिः प्रहरणमस्या, इति याष्टीकी शाक्ती की वत् सिद्धिः । अना-ढयः आढयः क्रियतेऽनयेति आढ्यं करणी, आढय-कृ, आढ्य सुभग स्थूल पलितनग्नान्धप्रियेषुच्व्यर्थेष्वच्वौ कृञः करणे ख्युन् प्रत्यये युवोरनाकाविति अनादेशे गुणे मुमागमे । तरुणत्व, तलु-नत्व, यौवन वयोविशिष्ट,विति तरुणी तलुनी, तरुण-तलुनाविति शब्दात् ङीपि भत्वात् अलोपे उणादि योरल्लोवेति निष्पन्नौ शब्दाविमौ । गर्गस्य गोत्रापत्यं स्त्रीति गार्गी (गर्ग) 'गर्गादि-भ्योयञ् इति यञि वृद्धौ अलोपे गार्ग्य ततः ङीपि अलोपे 'हल-स्तद्धितस्येति यलोपे । गर्गस्य युवापत्यं स्त्रीति गार्ग्यायणी' पूर्वोक्त
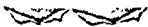
गार्ग्य शब्दात् 'प्राचांष्फतद्धितः, ष्फप्रत्यये षः' गार्ग्यस्येति पदसंस्थेन्मसायां फस्य आयनेयीनीयीयेति आयनादेशे—ङीपि अलोपेणत्वेच। नर्तन शीलेति नर्तकी नृत धातोः 'शिल्पिनिष्वुन्। इति ष्वुनि-षस्येत्संज्ञायाम्।' युवोरिति अकादेश-गुणे च गौरत्ववर्ण विशिष्टेति गौरी गौरशब्दात् ङीपि अलोपे। अनुडुहः स्त्रीति अनुडुहांडी अनुडुही, अनडुह शब्दात् आमनडुहः स्त्रियाम्वा इति आमागमे-यणि अनुस्वार परसवर्णे ङीपि। कुमारत्व वयो विशिष्टेति कुमारी वयसि प्रथमे, इति ङीपि अलोपे। त्रयाणां लोकानां समाहार इति त्रिलोकी तद्धितार्थेति समासे स्त्रीत्वे द्विगोरिति ङीपि अलोपे। त्रयाणां फलानां समाहार इति त्रिफला तद्धितार्थेति समासे। ततः स्त्रीत्वेटापि सवर्णे दीर्घे एवमेव त्र्यनीका सेना। तिसृणा मनीकानां समाहार इति। एतत्व वर्ण विशिष्टेति एनी एता रोहितत्व वर्ण विशिष्टेति रोहिणी रोहिता एत शब्दात् रोहितशब्दाच, वर्णादनु दात्तात्तोपधात्तोनः, इति ङीपि तस्य नकारादेशे भत्वादलोपे। मृदुत्व गुणविशिष्टेति मृद्वी मृदुः (मृदु) वोतोगुणेति ङीप बहुत्व गुणविशिष्टेति बह्वी बहुः (बहु) बह्वादिभ्य इति ङीप् राशादिभ्यां त्रिप्, रात्रिः, रात्री, शकटी, शकटिः, कृदिकारादिति ङीपि विकल्पेन, गोपस्य स्त्रीति गोपी, (गोप) ङीपि अलोपे. पुंयोगादिति ङीप गोपालकस्य स्त्रीति गोपालिका, गोपालक शब्दात् टापि प्रत्यय-